नन्दोत्सवः

डा० वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी

नन्दोत्सवः

(भारत के गण्यमान्य विद्वानों द्वारा प्रशंसित)

श्रीमद्भागवत पुराण पर आधारित शुकदेवजी, नन्दजी,
बसुदेव-देवकी, रोहिणीजी, बलदेवजी की
सम्पूर्ण व्याख्या सहित कृष्ण
जन्म का सुन्दर
संग्रह।

लेखक—
उ. प्र. राज्य पुरस्कृत, लब्ध स्वर्णपदक:
डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी
नव्य व्याकरण-साहित्य, पुराण-इतिहास, वल्लभ वेदान्त, धर्मशास्त्र,
ज्योतिष, सांख्य-योगाचार्य, काव्यतीर्थ, साहित्यरत्न, एम. ए.
संस्कृत हिन्दी, पी-एच. डी., डी. लिट्
प्रवाचक, अध्यक्ष, शोध निर्देशक
प्राच्यदर्शन महाविद्यालय, वृन्दावन, मथुरा

प्रकाशक—
श्रीवेंकटेश्वर पुस्तकालय, मथुरा

तुलसी जयन्ती सं. २०३५] [मूल्य 5.००

उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी
लखनऊ के ६०% अनुदान
साहाय्य से प्रकाशित

☆

प्रथम बार—१०००

☆

प्रकाशन तिथि—तुलसी जयन्ती
सम्वत्—२०३५

☆

प्रकाशक—
श्रीवेंकटेश पुस्तकालय, मथुरा

☆

मुद्रक—
बनवारीलाल शर्मा
श्रीसर्वेश्वर प्रेस, वृन्दावन।

समर्पणम्

प्रातःस्मरणीयानवद्य - विद्याविद्योतिताऽन्तःकरणानाम् श्रीबन्नाजी पौराणिक 'बनेश' तनूजानाम्, नव्यव्याकरण-साहित्य-धर्मशास्त्र, ज्योतिष, कर्मकाण्ड, तन्त्रशास्त्र, पुराणाद्यनेकशास्त्र पारावारीणानाम्, कथा-वाचक मूर्धन्यानाम्— श्रीद्वारकेश संस्कृत महाविद्यालय मथुरा प्रधानाचार्याणाम्, गो-लोकवासि पण्डित-प्रवर-पितृचरण, स्व-नामधन्य पण्डित श्री **श्रीवर चतुर्वेद शास्त्रि** गुरुवर्याणाम्, करकमलयोः सादरम्-समर्पणम् ।

धौतंवस्त्रमथोत्तरीयममलं स्वच्छं द्वयोः स्कन्धयोः ।
ग्रीवायां तुलसी स्रजञ्च विदधत् दक्षांगुलौ मुद्रिकाम् ॥
गोपीचन्दनसृत्सया च तिलकं विभ्रत्श्रियं श्रीवरम् ।
वन्दे भागवती कथामनुपदं व्याख्यातवन्तं गुरुम् ॥

येषां कृपा बलादाप्तः श्रीमन्नन्दमहोत्सवः ।
तदीयस्तनयः 'कृष्णः' समर्पयति तत्करे ॥

अनन्तश्री विभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य पीठाधीश्वर वर्तमान निम्बार्काचार्य **श्री श्रीजी श्रीराधासर्वेश्वरशरण-देवाचार्यजी महाराज** (नि० तीर्थ, सलेमाबाद) के

❀ शुभाशीर्वचन ❀

अनन्तकोटि ब्रह्माण्डाधिपति, निखिलभुवनमोहन, अशेष-कल्याणगुणगणनिलय, सर्वेश्वर व्रजेन्द्रनन्दन भगवान् श्रीकृष्ण की अनन्त-लीलाओं में जन्मोत्सवलीला अर्थात् नन्दमहोत्सव-लीला सर्वाधिक विलक्षण विविधरससंवलित ललितमधुरिमा संपृक्त है। वस्तुत: वह महामङ्गलमय पावन दिवस, वह अनन्तमहिमामय क्षण कितना मनोहारी एवं अद्भुत रहा होगा। यथार्थ में उसके परिवर्णन में शेष-गणेश-शारदा भी अपने को असमर्थ पाते हैं। वाणी स्तब्ध एवं लेखनी अवरुद्ध हो जाती है, किन्तु यह सब होते हुए भी व्रजवासीजन साधिकार उस महो-त्सव का सोल्लास वर्णन करने में सक्षम हैं।

ऐसे ही उत्तम रसिकोंमें विद्वन्मूर्द्धन्य पं० श्रीवासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी है। जिन्होंने अपनी रसवर्षिणी लेखनी से नन्दोत्सव का जो रसदान किया है, वस्तुतस्तु वह निश्चय ही परम गरिमापूर्ण है। श्रीचतुर्वेदीजी की पीयूषवर्षिणी वाणी सर्वजनसुखावह होती है। गद्यात्मक पद्यात्मक प्रवचन, आलेखन सभी इतने सरस और सुन्दर होते हैं जिनमें रसिकजन विभोर हो उठते हैं। आपका संस्कृत वाङ्मय ग्रन्थों एवं हिन्दीसाहित्य युगसाहित्य का गम्भीर अध्ययन धार्मिक जगत् के लिये तथा विशेषकर श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय के लिये परम गौरवास्पद है। संस्कृत साहित्य में सहस्रों-सहस्रों श्लोकों में निबद्ध काव्यों का सृजन सुरभारती की महती सेवा है। यह "नन्दोत्सव" ग्रन्थ भी उन्हीं ग्रन्थों में अन्यतम है। श्रीसर्वेश्वर प्रभु ऐसे विद्वानों को इसी प्रकार साहित्यिक सेवा में प्रवृत्त रखते हुए लोकोपकार करावें यही हमारी उनके चरणकमलों में हार्दिक कामना है।

भारतवर्ष के विख्यात सन्त-परम विद्वान्

सर्वतन्त्र स्वतन्त्र १००८ श्रीपूज्यपाद

श्रीअखण्डानन्दजी सरस्वती महाराज कृत

शुभाशंसनम्

★

प्रत्नानि नूत्नानि च भावरत्ना-
न्यन्वेष्य नन्दोत्सवतः प्रयत्नात् ।
निर्मायहारं रस-रश्मि-सारं
श्रीवासुदेवो निदधातु वित्सु ।।

अर्थ—प्राचीन एवं नवीन भाव रत्नों को नन्दोत्सव से परिश्रम पूर्वक निकालकर रस की रश्मि के सार रूप हार को बनाकर (लेखक) श्रीवासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी विद्वानों के गले में स्थापित करें।

श्रीअखण्डानन्द सरस्वती
वृन्दावन

श्रीमन्निखिल गुण-गणालंकृतानामनवद्य-विद्याविद्योतितान्तः करणानाम् साहित्यार्णव पारावारोणानाम् गौडीयवैष्णव सिद्धान्त निष्णातानाम् श्रीगोपालचम्पू-श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पू श्रीपद्यावली-श्रीभक्ति ग्रन्थमाला प्रभृति प्राचोन ग्रन्थ सरस सफलटीकाकाराणाम् श्रीकृष्णानन्द महाकाव्य-श्रीहरिप्रेष्ठमहाकाव्य-श्रीवनमालि प्रार्थना शतक-श्रीराधारमण शतक-श्रोभक्तिनाममालिकाप्रभृत्यनेक काव्य काराणाम्, श्रीकृष्णानन्द स्वर्गाश्रम-श्रीमध्वगौरांग विद्यालय प्रतिष्ठापकानाम्, आजन्मसंस्कृत-साहित्य सेवापराणाम् बाल्यकालादेव परम विरक्तानाम्, आशुकवीनां घटिकाशतकानाम् श्रीवृन्दावनवासिनाम्, महाकवीनां श्री १०८ श्रीवनमालिदास शास्त्रि-महाराजानाम् ।

शुभ सम्मतिः

श्रीवासुदेव-बुध वर्य-विनिर्मितोऽयं,
नन्दोत्सवोविदिततत्त्वदृशा व्यलोकि ।
सिद्धान्तवर्णनपरं यदिहास्ति वस्तु,
गौडीयवैष्णवचितं तदु सर्वमेव ॥
श्रीवासुदेव कृष्णः, कृतवान् नन्दोत्सवं यमिह ।
तत्राष्टादशश्लोका, विवृतियाता. सु भाष्य पूर्वं हि ॥
अतस्तु विज्ञैरपिविज्ञतेप्सुभि-
र्विलोकनीयाकृतिरेषकाऽऽदरात् ।
विलोकनादेव हि विज्ञता लता,
आनन्दरूपं सुफलं फलिष्यति ॥
श्रीमद्भागवतीये, श्रीमन्नन्दोत्सवे विज्ञैः ।
लिखिता भावा ये ये, ते ते सर्वेऽत्रविद्यन्ते ॥
श्रीवासुदेवेन विनिर्मितेऽस्मिन् नन्दोत्सवे ऽपूर्वरहस्य-पूर्णे ।
स्व सम्मतिं साधुददाति पाठे महाकविः श्रीवनमालिदासः ॥५

—वनमालिदासः

वि. सं. २०३ श्रावणी, अमावस्या

शुभाशंसनम्

व्याकरण के महाविद्वान्, परम रसिक, काव्यकार
डॉ० कालिकाप्रसाद शुक्ल आचार्य एवं अध्यक्ष
व्याकरण-विभाग सम्पूर्णानन्द-संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

☆

डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित 'नन्दोत्सवः' पुस्तक का पर्यालोचन कर मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ हूँ। डॉ० चतुर्वेदी ने इस पुस्तक के सम्पादन में जिस बुद्धिवैभव का परिचय दिया है, उससे आकृष्ट होकर इसके सम्बन्ध में मुझे भी दो-चार शब्द लिखने का उत्साह हो रहा है। क्योंकि महाकवि श्रीहर्ष ने मुक्त कण्ठ से कहा है कि—"वाग्जन्मवैफल्यमसह्यशल्यं गुणाद्भुतेवस्तुनि मौनिता चेत्।"

डॉ० चतुर्वेदी ने नन्द, श्रीशुक, नन्दोत्सव आदि शब्दों के अन्वर्थ-व्युत्पत्ति-प्रदर्शन में जो बुद्धि-कौशल दिखाया है, उससे बड़े-बड़े शाब्दिक शार्दूल भी सहज आवर्जित हो सकते हैं। डॉ० चतुर्वेदी इस पुस्तक में स्थान-स्थान पर संस्कृत गद्य-रचना-कला के द्वारा सिद्धहस्त गद्य लेखकों की श्रेणी में स्थान प्राप्त करने योग्य हैं। विषय को प्रस्तुत करने में आपकी प्रतिभा श्लाध्य है। **मैं डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी की इस वैदुष्यपूर्ण पुस्तक के सम्बन्ध में हृदय से अपनी शुभाशंसा व्यक्त कर रहा हूँ।**

कालिकाप्रसाद शुक्ल
१८-८-७८

क० मुं० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ आगरा
विश्वविद्यालय आगरा के निर्देशक विख्यात
साहित्यकार, मूर्धन्यविद्वान्
पं० श्रीविद्यानिवासजी मिश्र
की

शुभ सम्मति

श्रीवासुदेवकृष्णचतुर्वेदिविदुषाप्रणीतो नन्दोत्सवाख्या ग्रन्थः श्रीमद्भागवतवर्णित श्रीकृष्णजन्मोत्सवप्रसङ्गोप-बृंहणात्मकः-सरसोभावपेशलः — सहजभाषाप्रवाह-तरलश्च । श्रीमता वासुदेवकृष्णेन श्रीकृष्णलीलारसः सम्यगास्वादितोऽस्मादेव हेतोः तेन नन्दगृहे यो जन्मोत्सवोभूत् तस्य सनातनमस्तित्वं स्वनिर्मित्या दृढीकृतमिति मन्ये । कथावाचनकुशलेन तेन सदृशां प्रसङ्गानां यथास्थानं महता सामरस्येन समावेशः कृतेन, तेन ग्रन्थस्य महिमापि वृद्धिं नीतः । आशासे नन्दोत्सवोऽयं सुधियां सहृदयानां हृद्दृशां समुत्सवाय भविष्यतीति ।

विद्यानिवास मिश्रः

भारत राष्ट्र के सुप्रसिद्ध महाविद्वान्
पं० श्रीबदरीनाथजी शुक्ल
कुलपति
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

शुभ सम्मति

प्रिय श्रीचतुर्वेदमहोदयाः

भवत्प्रेषितं नन्दोत्सवसम्बद्धं काव्यमामूलचूलमवलोकितम् । काव्यस्य अनेके गुणाः ग्रन्थेऽस्मिन् उपलभ्यन्ते । ग्रन्थस्य पूर्णो विन्यासः तस्य महिमानम् अभिव्यनक्ति । मम दृष्ट्या ग्रन्थोऽयं जनमानसं भगवदुन्मुखीकर्तु सम्यक् प्रभविष्यति, एतन्माध्यमेन भवदीयं यशः पाण्डित्यं च भविष्यत इतिहासस्य पृष्ठेषु समुचितं स्थानं प्राप्स्यतीति मे दृढो विश्वासः । राधावशंवदो भगवान् भवतामीदृशीं प्रवृत्तिमनुदिनमुपचिनुयाद्दयेन "या लोकद्वयसाधिनी चतुरता सा चातुरी चातुरी" इति सूक्त्या केनचिन् महाकविना वर्णितया चातुर्या भवदीयं जीवनं चमत्कृतं स्यादिति ।

बदरीनाथशुक्लः
कुलपतिः

साहित्यशास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान्—
श्रीबटुकनाथशास्त्री खिस्ते एम्०ए०, साहित्याचार्य
आचार्य एवं अध्यक्ष साहित्य विभाग, सम्पूर्णानन्द-
संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

अभिमतम्

(१)

भगवद्गुणवर्णनाभिरामं
विवृति-व्याज-विवर्धितप्रभावम् ।
व्यतनोद् विबुधः स वासुदेवो
नव-नन्दोत्सवसन्निबन्धरत्नम् ॥

(२)

वासुदेवसुधिया मतिश्रिया
मण्डितं विवरणं यदद्भुतम् ।
तत्समीक्ष्यकतमोनमोदते
नन्दनन्दनकृपावशंवदः ॥

(३)

चराचरगुरोश्चारुचरित्रं चित्रयंश्चिरम् ।
चञ्चत्कीर्तिश्चतुर्वेदश्चकास्तु चतुराग्रणीः ॥

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

शुभ सम्मति

पू० प्राध्यापकः–पुराणेतिहास-संस्कृति,भूगोल विभागस्य
बालणसेय सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालये

डा० वासुदेवकृष्णचतुर्वेदिमहोदयेन प्रस्तुतं नन्दोत्सवनामको ग्रन्थोमया सूक्ष्मेक्षिकया निरैक्षिषि। ग्रन्थोऽयं चतुर्वेदिमहाभागेन नन्दोत्सवसम्वन्धिनामष्टादशानां श्रीमद्भगवतीयपद्यानां समीचीनं विवेचनं कृतमस्ति। प्राचोनानां साम्प्रदायिकटीकाणां सारं संगृह्यात्र प्रत्येकपदानां भावार्थः सप्रयोजनः सम्यगालोचितोवर्तते। प्रतिपदं व्याख्याया महत्त्वपूर्णमिदं कार्यं दर्शं दर्शं चतुर्वेदिनां विशिष्टं वैकुण्ठं प्रगटी भवति। अभिनवां चतुर्वेदिनो व्याख्यानसरणिं विलोक्य प्रसीदतितमां मामकीनोऽन्तरात्मा। मन्ये समन्वयात्मकभावनया चतुर्वेदिना व्याख्यातानि इमानि श्रीमद्भागवतनन्दोत्सवपधानि समेषामानन्दकन्दसच्चिदान्दस्य गोपगोपीजनवल्लभस्य नन्दनन्दस्य भगवतः श्रीकृष्णचन्द्रस्य भक्तानां कृते परमप्रमोदाय सेत्स्यन्तीत्यत्र न कश्चन सन्देहलेशावसरः। अतोऽस्य ग्रन्थरत्नस्य प्रचुरं प्रचारं प्रसारं च हृदयतोऽहं नितरां निकामं कामये।

दिनाङ्क १५।४।७८ श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी

शुभ सम्मति

विश्व प्रसिद्ध पत्रकार एवं साहित्यिक पद्मविभूषण

डॉ० श्रीबनारसीदासजी चतुर्वेदी फीरोजाबाद

डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी द्वारा प्रेषित नन्दोत्सव नामक संस्कृत ग्रन्थ को यत्र तत्र मैंने देखा। गुरुजी की प्रशंसा मैं पहले सुन चुका था और उनके पूर्व पिताजी तथा पितामहजी के दर्शन करने का सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ था। मेरा संस्कृत का ज्ञान अत्यल्प है और पुस्तक के विषय में कुछ भी लिखना मेरे लिए धृष्टता की बात होगी, पर मैं गुरुजी के असाधारण व्यक्तित्व से प्रभावित हुआ। उन्होंने ज्ञान का जो भण्डार संचित किया है वह आश्चर्यजनक है। हमारे देश की संस्कृति देववाणी में ही मुख्यतया पाई जाती है और उसका ज्ञान हम लोगों के लिए अनिवार्यः आवश्यक है। पर जो लोग संस्कृत नहीं जानते उनके लिए राष्ट्रभाषा हिन्दी में अनुवाद होने चाहिए। श्रद्धेय गुरुजी इसी पवित्र कार्य का विधिवत् पालन कर रहे हैं और वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

फीरोजाबाद २३।८।७८ **बनारसीदास चतुर्वेदी**

॥ श्रीसर्वेश्वरो विजयते ॥

भूमिका

★

आनन्दकन्द व्रजचन्द्र भगवान् श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव वर्णन को ही नन्दोत्सव से अभिहित किया जाता है। अनेक पुराणों में भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन प्राप्त होता है, किन्तु श्रीमद्भागवत में जैसा सहज वर्णन, मनोहर वर्णन है अन्यत्र नहीं है। श्रीमद्भागवत में तृतीय अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण के जन्म का वर्णन किया गया है। प्रारम्भ के ८॥ श्लोकों में अर्धरात्रि, रोहिणी नक्षत्र के उल्लेख के साथ पावस की अँधियारी, पर्जन्य गर्जन और प्रकृति का विलक्षण वर्णन करते हुए कृष्ण-जन्म का वर्णन है, किन्तु यह उत्सव वहाँ नहीं होता, क्योंकि भगवान् वहाँ कारागार में हैं, अतः वे वसुदेवजी एवं देवकी को चतुर्भुज स्वरूप का दर्शन देकर अपना दिव्य स्वरूप दिखलाकर नन्द के व्रज में पधारते हैं। वसुदेव नन्दबाबा के गृह प्रकट हुई योगमाया को लेकर यमुना के मार्ग से ही लौट आते हैं, जिसे कंस मारने को उद्यत होता है, प्रभु की अचिन्त्य शक्ति योगमाया कंस के हाथ से छूटकर आकाश में स्थित होकर अष्टभुजा धारिणी देवी के रूप में दर्शन देकर तथा

श्रीकृष्ण के जन्म की सूचना देकर अन्तर्हित हो जाता है—उसने कहा—

"यत्र क्वचा पूर्वं शत्रुर्माहिंसीः कृपणान् वृथा"

"अर्थात् तेरा शत्रु कहीं उत्पन्न हो चुका है निरीह बालकों की हत्या व्यर्थ मत कर" कंस अपने असुर परिकर से मन्त्रणा करता है जिसमें पूतना, चाणूर, बकासुर, अघासुर, प्रलम्बादि एकमत होकर बालकों की हत्या का उपक्रम करते हैं, इस प्रकार जो शृङ्खला जन्म की मथुरा से-बनी वह एक प्रकार से अवरुद्ध हो जाती है क्योंकि यह वर्णन भी यहीं आवश्यक था। यहीं चतुर्थ अध्याय की परिसमाप्ति हो जाती है और नन्दोत्सव का प्रारम्भ होता है।

भागवतजी के पञ्चम अध्याय का प्रारम्भ 'श्रीशुक उवाच' से प्रारम्भ होता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में यहीं से शंका समाधान सहित विवेचन प्रारम्भ किया है, 'नन्दोत्सव' का भी विवेचन किया है। शुक उवाच पाठ मानना युक्त था, तब 'श्रीशुक उवाच' की आवश्यकता की ओर भागवतकार के अभिप्राय को व्यक्त करते हुए श्रीशब्द के अर्थ और शुक शब्द की व्याख्या दी गई है। यहाँ यह कथन कि भागवत में श्रीशुक उवाच केवल तीन स्थलों पर ही है, उक्त श्लोकों द्वारा ही प्रमाणित किया गया है तथा ब्रजमण्डल के विद्वान् इसे स्वीकृत करते रहे हैं।

श्रीशुकदेवजी के जन्म का प्रसंग भी यहाँ पौराणिकों की शैली के कारण प्रस्तुत किया गया है, वैसे यह व्याख्यान भागवत के प्रारम्भ में 'अमर कथा' के नाम से कथा में कहा जाता है।

नन्दबाबा कौन थे? वसुदेव और नन्दराय का क्या सम्बन्ध है? आदि प्रश्नों के समाधान में यह स्पष्ट किया है कि मूल परम्परा अजमीढ़ से है। अजमीढ़ की दो पत्नी थीं, एक वैश्य जाति की, दूसरी क्षत्रिय जाति की थी। वैश्य जाति की स्त्री से जो वंश चला, उससे नन्द और क्षत्रिय जाति वाली से वसुदेव हुए थे। १८ श्लोकों में नन्दोत्सव वर्णित है इस पर भी प्रकाश डाला गया है कि केवल १८ श्लोकों में ही इसे क्यों रखा गया। विभिन्न टीकाकारों के मतों का एवं अन्य संस्कृत साहित्य के महनीय तन्त्र शास्त्र आदि ग्रन्थों के आधार पर संख्या का विवेचन भी वहीं पठनीय है।

बलदेव जन्मोत्सव—श्रीमद्‌भागवत में बलदेवजी के बारे में केवल उल्लेख है कि वे प्रथम देवकी के गर्भ में तदनन्तर रोहिणी के गर्भ में पधारे, किन्तु जैसा वर्णन श्रीकृष्ण-जन्म का है वैसा बलदेवजी का नहीं। कृष्णलीला के समय वे साथ-साथ खेलते दिखलाये गये हैं, यहाँ कौतूहल होना स्वाभाविक है कि ऐसा क्यों? क्या बलभद्र जन्मोत्सव को भागवतकार विस्मृत कर बैठे या कोई अन्य कारण था। उनका जन्म किस मास में हुआ? कब हुआ? वे श्रीकृष्ण से आयु में कितने बड़े थे? यह वर्णन भी भागवत में नहीं है—

"अहो विस्रं सितोगर्भ इति पौरा विचुक्रुशुः"

अहो देवकी का सप्तम गर्भ नष्ट हो गया इतना कहकर, श्रीकृष्ण के तेज का देवकी में निरूपण है। इस स्थल पर बलभद्र जन्म का समय, नक्षत्र, योग, कुण्डली मास विवेचन करते हुए भाद्रपद मास में षष्ठी तिथि सिद्ध की है जो 'बलदेव छठ' के नाम से ब्रज में विख्यात है और गर्ग संहिता में उल्लिखित है। कंस के भय से यह उत्सव नहीं किया गया इसे भी व्यक्त किया गया है और यह भी कि भाई श्रीकृष्ण आवेंगे तभी दोनों का साथ उत्सव होना चाहिए।

प्रथम श्लोक "नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने" के तुकार शब्द आत्मज शब्द एवं 'उत्पन्न' पर विवेचन प्रस्तुत किया है प्रत्येक शब्द साभिप्राय है इसे प्रस्तुत किया गया है। अनेक ग्रन्थों के उद्धरण भी साथ में दिये गये हैं। विशेष रूप में भागवत के टीकाकारों की टीकाओं के महनीय अंशों को यहाँ प्रस्तुत किया है, किन्तु मैंने विशेषतः अपने पूज्य पितामह पं. बन्नाजी पौराणिक 'वनेश' के संग्रह को आधार बनाया है। पूज्य पितामह ने यह संग्रह अपने गुरुजनों की कथाशैली से प्राप्त किया फलतः व्रज की एक परम्परा उन्होंने अपने कनिष्ठ पुत्र पूज्यपितृ चरण स्व० पं० श्रीश्रीवरजी को प्रदान की थी और मेरे पितृचरण जो अपने समय पितामह की भाँति विशिष्ट एकमात्र वक्ता थे की कृपा से वह मुझे प्राप्त हुई।

इस संग्रह में देखने से ज्ञात हुआ कि अधिकांश अंशजीव गोस्वामीजी के गोपालचम्पू एवं अन्य गौड़ीय वैष्णवों के महनीय ग्रन्थों से ग्रहण किये हैं, उस समय जबकि मुद्रित ग्रन्थ आदि का प्रचलन नहीं था संग्रह करना दुष्कर एवं गुरु-सेवा लब्ध कार्य ही था। मैंने अनेक अंश सन्दर्भ रूप में प्राप्त कर सुस्पष्ट किये हैं और स्वत: अध्ययन के आधार पर व्यक्त करने का संस्कृत भाषा में प्रयास भी किया है।

नन्दोत्सव पर प्रस्तुत सामग्री से वाचक वृन्द तो अवश्य लाभान्वित होंगे ही, प्रभु कृपा होगी तो अगली बार हिन्दी सहित इसे प्रस्तुत करने का प्रयास करूँगा।

इस समय हिन्दी में क्वचित् संकेत दिया है जिससे मूल का अर्थ सुस्पष्ट होता रहे इस कार्य में पं० श्रीरघुनाथ प्रसादजी चतुर्वेदी सा० आ० ने सहयोग दिया है, अतः धन्यवाद प्रदान आवश्यक है।

मुद्रण कार्य में संशोधन का कार्य गवेषक पं० श्रीगिरिराज प्रसादजी व्या० आ० व्या० विभागाध्यक्ष निम्बार्क सं० म० वि० वृन्दावन ने किया है जिसके लिए मैं उनकी वृद्धि की कामना सर्वेश्वर प्रभु से सधन्यवाद करता हूँ।

उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी के आर्थिक सहयोग से यह कृति प्रस्तुत करते हुए प्रकाशक वेंकटेश्वर पुस्तकालय भी गौरवान्वित हुआ है।

जगद्गुरु अनन्त श्रीविभूषित श्री श्रीजी महाराज का परम आभारी हूँ जिन्होंने अत्यन्त व्यस्तता के क्षणों में से भी इसे देखकर अपने आशीर्वचनों से मुझे कृतार्थ किया है। मैं उनके चरणों में प्रणाम करता हूँ।

१००८ श्रीपूज्यपाद अखण्डानन्दजी महाराज, श्री१००८ विठ्ठलेशजी महाराज, डा० श्री श्रीकृष्णमणिजी त्रिपाठी संस्थापक शोध संस्थान वाराणसी पं० लक्ष्मणदत्तजी शास्त्री पौराणिक श्रीरमेशचन्द्रजी शर्मा निदेशक पुरातत्त्व संग्रहालय मथुरा, श्रीवैद्यनाथजी झा प्राचार्य श्रीकालिकाप्रसादजी शुक्ल वाराणसी सा० आ० श्रीवटुकशास्त्री खिस्ते प्रभृति महानुभावों की शुभ सम्मतियों प्रेरणाप्रद वचनों का बल मुझे उत्साहित कर रहा है।

महाकवि श्रीबनमालिदासजी ब्रज की विभूतियों में हैं उन्होंने ५ श्लोकों में अपनी सम्मति दी है तथा यत्र-तत्र निर्देश भी दिये हैं उनके उपकार को भुलाया ही नहीं जा सकता, अतः कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरा कर्तव्य है।

लब्धख्याति विद्वान् डा० शरणबिहारीजी गोस्वामी प्रधानाचार्य प्राच्यदर्शन महाविद्यालय वृन्दावन का अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने कृपा कर अपनी शुभ सम्मति देकर मुझे उत्साहित किया है।

सर्वेश्वर प्रेस के मुद्रण कर्ताओं को भी धन्यवाद प्रदान करना कर्तव्य समझता हूँ। जिन्होंने इसे बड़ी शीघ्रता से प्रकाश

में लाने में सहयोग दिया है। कु० उर्मिला अग्रवाल एम. ए. तथा कु० रेखागुप्ता एम. ए. पू. एवं चि० हरदेवकृष्ण, सहदेव कृष्ण, नरदेवकृष्ण ने प्रेस कार्य के लिए जो सहयोग दिया आशीर्वाद देता हूँ।

प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष मैंने जिनसे भी कुछ अच्छा ग्रहण किया है कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ तथा त्रुटियों के लिए करबद्ध क्षमा प्रार्थी हूं यदि विद्वज्जन इससे लाभान्वित हुए तो श्रम सार्थक समझूँगा।

विद्वान् कथावाचक वंश में उत्पन्न होने के फलस्वरूप अनेक कृतियों को प्रकाश में लाने का संकल्प है जिनमें भागवत से ही सम्बन्धित अनेक हैं रसिकों के सहयोग से तथा प्रभु की कृपा से संकल्प अवश्य पूर्ण होगा।

विनीत—

रक्षाबन्धन सं० २०३५ **वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी**

सुप्रसिद्ध व्रजभाषा के प्रकाण्ड विद्वान् प्राच्यदर्शन
महाविद्यालय वृन्दावन के प्रधानाचार्य
डॉ० शरणबिहारीजी गोस्वामी की

शुभ सम्मति

श्रीमद्भागवत भारतीय मेधा और अनुभूति का एक उत्कृष्ट ग्रन्थ है, जो वैष्णवों के लिए 'सन्ध्या भाषा' है, सिद्ध वाणी है। श्रीमद्भागवत का प्रतिपाद्य प्रमुखतः श्रीकृष्ण के रसमय चरित्र का वर्णन है। श्रीकृष्ण की प्रत्येक लीला भक्ति-रस-रसिकों के चित्त में आनन्द-रस-सागर का उद्वेलन करती है। श्रीकृष्ण-जन्म के पश्चात् 'नन्दोत्सव' की कथा ब्रज के उल्लास की अपूर्व उद्वेलक है। 'नन्दोत्सव' के कथा-प्रसङ्ग को लेकर संस्कृत वाङ्मय के प्रसिद्ध विद्वान् डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी ने अपनी कारयित्री एवं भावयित्री दोनों ही प्रतिभाओं का उपयोग करते हुए इस प्रसङ्ग को व्याख्यायित किया है। वे संस्कृत पद्य एवं गद्य-लेखन की दोनों विधाओं में निपुण हैं। इस व्याख्या और विस्तार में उन्होंने अपने वैदुष्य का परिचय दिया है। संस्कृत भाषा के ज्ञाताओं के साथ ही केवल हिन्दी जानने वालों के लिए भी उन्होंने कुछ टिप्पणियाँ भी योजित की हैं।

उनका यह नन्दोत्सव ग्रन्थ रसिकजनों एवं विद्वानों—दोनों को ही तृप्त करने में समर्थ है। डॉ० चतुर्वेदी इस प्रकाशन के लिए साधुवाद के पात्र हैं।

शरणबिहारी गोस्वामी
प्राचार्य

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

ंख्या
२२
२३
२३
२४
२५
२५
५-२६
२७
२८
२८
२९
३०
३१
३२
३२
३२
३३
३४
३५
३६

पृष्ठ संख्या

※ श्रीद्वारकेशो जयति ※

नन्दोत्सवः

।। तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

श्रीमद्‌भागवते नन्दोत्सवारम्भे श्रीशुक उवाच इति कथितं तस्याभिप्रायोवर्ण्यते—

इहान्तरे भागवतस्य सम्यक्
श्रीमच्छुकस्यास्ति सुकीरता सा ।
माधुर्यतः श्री पदमस्य मध्ये
ह्यादौ व्रजेशात्मज-जन्म-मध्ये ।।१

ततो विधे-मोहन-सच्चरित्रे
कृच्छ्रात्पुनर्लब्ध बर्हिदिशः शनैः ।
इत्यादि वाक्यप्रमितेस्ततः श्री
वृन्दावने रास रसे महोत्सवे ।।२

एवं चरित्र-त्रय मध्यतः श्री
शुकस्य प्रेम्णः परिपाट्यु दोरिता ।
सा प्रश्रुता भागवतप्रधानात्-
हेतोः सुकेतोरतिभक्तिभाजाम् ।।३

ततः श्री प्रेम सम्पत्तिस्तया सह शुकः स्वयम् ।
जगौ श्रीमद्व्रजेशस्य सुत जन्म महोत्सवम् ।।४

श्रीमद्भागवत पुराण के रचयिता श्रीमत् कृष्णद्वैपायन वेदव्यासजी द्वारा श्रीमद्भागवत में प्रायः सर्वत्र ही शुकदेवजी की उक्ति में केवल "शुक उवाच" का ही प्रयोग किया है, जब कि इस नन्द-महोत्सव के प्रारम्भ में "श्रीशुक उवाच" ऐसा प्रयोग किया है, यहाँ "शुक उवाच" के पूर्व श्री शब्द के प्रयोग का क्या प्रयोजन है। इस नन्द-महोत्सव रचना के इस प्रसंग में यहाँ उसी अभिप्राय को व्यक्त किया गया है।

इन तीन छन्दों के अनुसार 'शुक उवाच" के पूर्व "श्री" शब्द का प्रयोग श्रीमद्भागवत ग्रन्थ में केवल तीन ही स्थानों पर था, नन्दकुमार-भगवान् श्रीकृष्ण के जन्म के अवसर पर, वृन्दावन में रासोत्सव के अवसर पर तथा भगवान् ब्रह्मा के मोह प्रसंग के अवसर पर किन्तु आज प्रकाशित पुस्तकों में यह सर्वत्र देखने को मिलता है जो बिल्कुल ही अयुक्त तथा अनुपयुक्त है।

तच्छ्री शुक उवाचेति प्रोक्तमादौ समंततः।
वस्तुतस्त्वखिलात्रैव प्रेम सम्पत्तिरद्भुता ।।५
यद्वा 'शुद्ध' भागवतं 'कायति' ख्याति शोभनम्।
अतः 'शुक' इति प्रोक्तः सर्व शास्त्रेषु भामिनी।।६

शु=शुद्धं भागवतं— क-कायति कथयति-इति शुकः। अथवा शुकवत् शास्त्रं वदते-इति शुकः—

"शुकवद्वदते शास्त्रं शुकस्तेननिगद्यते"

(भाग० मा०)

(क) श्रीरिवाचरतीति श्रीः गोपीरूपः स चासौ शुक, इति अतस्तादृशसद्वेशादिना भगवज्जन्मोत्सव-परिभाषणयुक्तमिति भावः।

(ख) श्रीभिः हृदि ध्याताभिः व्रजवल्लवीभिः प्रेरितः शुक—इति श्रीशुकः।

(ग) श्रीणां तासां पाठितः शुकः कीरः - इति श्रीशुकः—(अत्र मध्यमपद लोपिसमासः)

(घ) श्रियः परमरमा व्रजवल्लव्यः इष्टदेवता यस्य सः - श्रीः शुकः—स्वेष्ट देवीनां वर्णनंयुक्तमिति-भावः।

(ङ) श्रियमिष्ट इति श्रीशुकः। अत्र उण् प्रत्यय।

(च) श्रीशः-श्रीकृष्णात् शुं=शुद्धं कंप्रेमसुखं यस्य स श्रीशुकः।

(छ) श्री शुं=भागवतं सौन्दर्यं, माधुर्यं वा कायति गायतीति वा श्रीशुकः तस्य सर्वात्मना परि-भाषणयुक्तमिति भावः।

(ज) श्रीशाय नन्दपुत्राय, स्व गुरवे व्यासाय वा नमितं कं शिर यस्य स शुकः।

(झ) नन्दोत्सवे 'श्रीशुक उवाच' अन्यत्र शुक उवाच इति शंकामुद्भावयति तत्रकारणम् ब्राह्मणेन परीक्षित नृपाय शापः प्रदत्तस्ततः सप्तदिवसावधि श्रुत्वा राज्यात्

सर्वत्रवैराग्यमभूत् । गंगातटेस्थितं तं श्रुत्वा सर्वेजना जग्मुः—सर्वेषांगमनानन्तरं शुकगमनं भवति । शुकः-श्रिया सह गच्छति । श्रीपदेन धनबोधः स्वरूपबोधो वा अथवा श्रीशब्देन वाणी शोभते ।

शुकस्यधनंभागवतं तेन सह गच्छति-इति श्रीशुक-भागवतम् तदपि शुकमुखनिर्गतम्* शोभारूपमेव ।

(ञ) नन्दोत्सवे नन्देन श्रीर्दत्ता अतः श्रीशुकः ।

(ट) नन्दोत्सवे दानार्थं श्री सहितोगतः । श्रीशुकः

(ठ) शुकवाणी मधुरा भवति । अतः श्रीशुकः

श्रीशुक उवाच—इत्यत्रापरं कारणम् ब्रह्मवैवर्तादि-पुराणेषु शुकस्यमाहात्म्यप्रतिपादनात् सिद्ध्यति । तद्यथा—

अथापरं बोधमिहापिकारणं
श्रीमच्छुकस्यैव सुनास्तिमध्ये ।
ब्रह्मादि वैवर्त-पुराण-व्याख्या
व्यासंप्रति श्रीभगवद्गिरापि ।।

---

* निगम-कल्पतरोर्गलितं फलम्, शुकमुखादमृतद्रव-संयुतम् ।
पिबत भागवतं रसमालयम्, मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः ।।
(भा० १।१।३)

व्यासस्त्वदीयतनयः शुकवन्मनोज्ञं
ब्रूते वचो भवतु तच्छुक एव नाम्ना ।
तच्चेह नामकरणादति प्रेमतस्तत्-
जन्मोत्सवं शुक मुनिः समुवाच हर्षात् ॥

श्रीमद्भागवताद्यश्लोकेऽपि शुक वन्दना कैश्चित् व्याख्याता तद्यथा—"जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्" (भा० १।१।१)

वयं तं शुकं धीमहि । ननु स्व पुत्रस्य शुकस्य ध्यानं कथं व्यासः कृतवानित्यत आह ॥ किं भूतं परं ब्रह्मरूपं ब्रह्मवित्त्वात् । 'ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति' इति श्रुतेः । तथा

"ज्ञानीत्वात्मैव मे मत" मिति स्मृतेश्च ।

श्रीवसुदेवाद्यैः ब्रह्मरूपत्वादेव श्रीकृष्णादानांपुत्रतामाप्तानामपिस्तुतिः कृतेति ज्ञेयम् । पुनः सत्यम् सर्वदा वर्तमानं महायोगित्वात् । योगिनोहि योग बलेन सदा तिष्ठन्ति । तदुक्तं "योगिनां सर्वदास्थितिरिति" योगसिद्धान्ते ।

यहाँ श्री और शुक शब्द के अनेक अर्थ प्रकट हुए हैं। जिनमें विशुद्ध श्रीमद्भागवत के कहने वाले शुक, शुक की तरह मीठा बोलने वाले शुक, हृदय में ध्यान व्रजवल्लवी रूप स्त्रियों

से प्रेरित शुक आदि अनेक सुन्दरातिसुन्दर अर्थों की अभिव्यक्ति हुई है।

श्रीशुकस्तु महायोगी तस्य सर्वदा स्थितौ शंकैव नोदेति। महायोगित्वं तु तस्य "सनिध्यात्तो महायोगिन्" इति भागवते परीक्षिदुक्तेः। "तस्यपुत्रोमहायोगीसमदृङ्निर्विकल्पक:" इतिसूतोक्तेश्चज्ञायते। पुनः किं भूतं स्वेन धाम्ना=निजेन प्रकाशेनस्वात्मानन्द प्रकाशेन 'निरस्त कुहकं'—जन्म मरण लक्षणं यस्य तम्। न स पुनरावर्तत इति श्रुतेः। "न जायते म्रियते वा कदाचिदिति" स्मृतेश्च। ज्ञानिनो जनि-मृती नस्तः। एतद्विशेषणसत्यत्वे हेतुरेव। यः शुकः स्वराट्-स्वयमेवराजते प्रकाशते इति स्वराट्। अज्ञैरपि—अयं ज्ञानीति ज्ञायते किं पुनर्विज्ञैरिति। अतएव स्नातीभिर्देवीभिस्तं निरस्ताज्ञानं ज्ञात्वैव वस्त्राणि न परिधत्तानीति प्रथमस्कन्धे सुष्पष्टमिति।* यश्च अर्थेषु=निवृत्तिमार्गेषु, अभिज्ञो=ज्ञाता कुंठमेधस्त्वात्। 'प्रशांतमासीनमकुंठमेधसम्' इत्युक्तेः। अत्र 'अर्थ' शब्दोनिवृत्त्यर्थकः। यद्वा

---

* दृष्ट्वानुयांतमृषिमात्मजमप्यनग्नं,
देव्योह्रिया परिदधुर्न सुतस्य चित्रम्।
तद्वीक्ष्यपृच्छति मु नौ जगदुस्तवास्ति-
स्त्री पुंभिदा न तु सुतस्यविविक्त दृष्टेः॥ (भाग० १।४।५)

अर्थेषु धर्मादिषु अभितोनियोजयति। लोकानिति तथा-
वनीयस्त्वात्।

धर्मार्थ काममोक्षांश्च मां याचध्वं ददाम्यहम्।
इति यः प्रवदेद्दाताऽवनोयानितिस्मृत ॥
—इति लक्षणात्

"तं कं" यत्र त्रयाणां गुणानां सर्गो देहादिर्मृषा
तस्यात्मनिष्ठत्वात्। कथं यथा तेजोवारिमृदां विनिमयः
कार्यमृषेति। ननु तस्यात्मनिष्ठत्वेदेहादिस्थितिः कथं
तत्र वक्ष्यति।※ यश्च कवये=विदुषे परोक्षिन्नपायादि
सनातनं ब्रह्मश्रीमद्भागवतं तेने=हृदस्नेहेने। "हृत्स्नेहे
च सुहृद्बन्धुमनो दृष्टि हरिष्वपि" इत्यभिधान चिंता-
मणेः। स च कोंकण देशे परीक्षिते शापं श्रुत्वा स्नेहा-
त्त्रागत्यतमुपदिदेशेति योगवासिष्ठे। यत्र सूरयो=
मुह्यन्ति यश्च शुक इतरतः=प्रशांतमतिः, किं भूताय
जन्मादीनि=जन्मस्थितिलयान्यस्यंतेक्षिप्यन्ते तिरस्क्रि-
यन्तेऽनेनेति जन्माद्यस्य ज्ञानं तस्मैयतत इति "जन्मा-
द्यस्यय"। अत्र उ प्रत्ययस्ततश्चतुर्थ्यर्थेतसौ कृते

※ देहोऽपिदैववशगः खलु कर्म यावत्
स्वारम्भकं प्रति समीक्षत एव सासु.।
तं स प्रपञ्चमधिरूढ समाधियोगः
स्वाप्नंपुनर्न भजते प्रति बुद्ध वस्तुः ॥ इति

जन्माद्यस्य यत इति स्यात्। शुद्धं चतत्रामृशलाभियुक्ता इति तदुक्तेरेव ज्ञायते तस्य ज्ञानं यत्नः। शुद्धं तु ज्ञानमेव "नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिहविद्यते" इति श्रीसुखोक्तेः।

श्रीमद्भागवत पुराण के प्रारम्भिक श्लोक "जन्माद्यस्य" आदि में "सत्यं परं धीमहि" के स्थान पर कुछ व्याख्याता "तं श्री शुकं धीमहि" ऐसा पाठ स्वीकार करते हैं, जिस पर शंका करने वाले विद्वानों का यह कथन है कि यहाँ श्रीमद्भागवत के लेखक पिता श्रीवेदव्यास पुत्र शुक का अनुचित ध्यान किस प्रकार कर रहे हैं? इस प्रसंग में प्रारम्भिक श्लोक की तदनुसार व्याख्या के साथ शुकदेवजी के वास्तविक स्वरूप को प्रकट किया गया है।

शुकस्तु सञ्जीवनमन्त्रगृहीतेति पाद्मोक्तामरकथा प्रमाणात्। कैलास शिखरे शिवः उमांप्रति धर्मतत्त्व-मवोचत्। धर्मतत्त्व-चिन्तन-वेलायां नारदोमुनिस्तत्रा-गतः। ध्यानावस्थितंशिवं पश्यन् पार्वतींप्रति जगाम। पार्वती नारदमुनिंसत्कृत्यापूजयत्। जाते कुशलप्रश्ने नारदः प्राह, शिवे ! मन्येशिवः सर्वतत्त्ववार्तां न श्राव-यति त्वामिति। शिवा प्राह— नहि नहि "ते कपट रहिताः" नारदः प्राह–यद्येवं, तर्हि किं श्रुतं भवत्यै गुह्यमहामृत्युञ्जयरहस्यम् कदापि ! नारदस्तु नारायण, नारायण, नामोच्चारणं विधाययथागतस्तथैव गतः।

किन्तु शिवा शीघ्रमेव शिवसमीपे जगाम प्राह च स्वामिन् ! धर्मतत्त्वाधिकारिणीं स्वीकृत्यापिभवता गुह्यमन्त्राधिकारिणी न स्वीकृता। नारदागमन वृत्तान्तमाकर्ण्य जहास शिवः, पूर्वं मनसि चिन्तितमपि स्त्रीस्वभावत्वान्नेयमधिकारिणी तथापि—आग्रह विशेषत्वात् कैलासस्थित वटवृक्षाधोभागे शिवया सह जगाम। तत्र पक्षिसंघं तालिका शब्देनोड्डाप्य मन्त्रोपदेशं ददौ, वटस्थिते नीडे निःसत्वे शुकाण्डे मन्त्र श्रवणकाल एव चैतन्यत्वं प्राप। पार्वत्या निद्रावशी भूते जाते मन्त्रप्रभाव पुष्टोऽयं शुको मध्ये मध्ये हुंकार शब्दान् तथैव विसर्जयामास यथा शिवप्रोक्ता पूर्वं शिवा प्राह। निद्रा व्यपगमे शिवा पुनः प्रार्थितवती यन्ममाग्रे पुनस्तत्त्वं प्रकटयन्तु भवन्त इति। कोऽत्र येन त्वदनुकरणमाचरितमितिकथनवेलायां प्रबुद्धो शुकस्तत्रत उड्डीयाकाशं प्राप।

शिवोऽपि मन्त्रमणि-तस्करं मन्यमानस्तदनुजगाम शुकस्तु सर्वत्र भ्रमन् नात्मन उद्धारोपायं विचिन्त्य व्यासाश्रये जगाम। व्यासपत्न्याः मुखे प्रविष्य तत्रैव प्रविष्टः गर्भस्थितिमवाप। शंकरः प्राह व्यासं यद् भोः ! मम तस्करस्तव पर्णशालां प्रविष्टः। व्यासः प्रोवाच। स्वागतं स्वयमेव विलोकनीयम् योगस्थितो

भूत्वा शिवः पुनरुवाच यद् तवपत्न्याः जठरे स्थितः सः । शुक वधानन्तरमेव कैलासं यास्यामीति जगाद । व्यासपत्न्या शिवः पृष्टः यत् 'किं गृहीतमनेन जीवेन ?' शंकरः प्राह 'संजीवन मन्त्रः' । सा प्राह कथं मरिष्यति पुनः स । शिवो विचिन्त्यं यदनेनामृतविद्या श्रुता अतो व्यर्थमेव मे मारणसंकल्प इति विचार्य प्रतिनिवृत्तः कैलासम् । भगवत् स्वरूपत्वात् व्यासपत्नी गर्भं न मुमोच । द्वादशाब्दे व्यतीते व्यास प्रार्थनया प्रासूत सा शुकयोगिनम् ।

पुराणान्तरेषु श्रीकृष्णस्यवरप्रदानन्तरं प्रादुर्भूतः शकः । माया प्रभावस्तवोपरि प्रभावशून्योइति प्रतिज्ञां श्रुत्वा वा शुकोत्पत्तिः । रामकथा कैलासे ह्यासीदिति केचन विद्वांसः । अष्टसिद्धि सहैव शुकस्तत्रागत इत्यभिप्रायेण श्रीशुक उवाचेति । अथवा शुकस्तु परमहंसः स च विचारयति यदहं स्व वाणीं समर्पयिष्यामीति ।

अथवा (शु=सुखं ब्रह्मध्यानेनास्ति ।)

(कः–नान्यः साधनः कोऽपि । उक्तमपि)

"किं वा योगेनसांख्येन न्यासस्वाध्याययोरपि"

(शुकः–सुकुमारांगः) । अशनापिपासा-शोक-मोह-

जरामृत्यु-रहितः सदा षोडशवार्षिकः। यथा भागवते सुष्पष्टम्—

तं द्व्यष्ट वर्षं सुकुमार पाद-
करोरु बाह्वंस कपोलगात्रम्।
चार्वायताक्षोन्नसतुल्यकर्ण
सुभ्र्वाननंकम्बु सुजातकण्ठम्॥
(भा० १।१९।२६)

(शु=श्रेष्ठा) (क=भगवत्कला तेन शुकाख्यः।)

(उवाच—उवशब्देन भागवतं राजापरीक्षितं प्रति वक्ष्यति तेन उवाच।)

अथवा भागवत श्रवणेन अग्नि शृङ्गि दांष्ट्र हतानां विषयात्मकानां "उच" शब्देन उच्चपदवी प्राप्तिः। तद्यथा पाद्मोक्त माहात्म्ये—

असारे संसारे विषयविषसंगा कुलधियः।
क्षणार्धं क्षेमार्थं पिबत शुकगाथातुलसुधाम्॥
किमर्थं व्यर्थं भो व्रजत कुपथे कुत्सित कथे।
परीक्षित्साक्षी यच्छ्रवणगत मुक्त्युक्ति कथने॥
(भा० ६।१००)

(अथवा वा—विकल्पार्थे च—पुनरर्थे-अव्ययार्थाः ।)

इस प्रसंग में, कैलाश पर्वत पर पार्वती के प्रति भगवान् शंकर द्वारा धर्म तत्व के कथन के अवसर पर शुक के पूर्वजन्म के वृत्तान्त को बतलाया गया है, इस प्रसंग में भगवान् शंकर के समीप आने वाले नारद शंकर को ध्यान मग्न देखकर पार्वती के पास चले जाते हैं, जहाँ उन्हें भगवान शंकर से गुह्यातिगुह्य महामृत्युञ्जय मन्त्र के रहस्य को जानने के लिये उकसाते हैं, जिससे भगवान् शंकर पार्वती को साथ लेकर वट-वृक्ष के पक्षि समुदाय को ताली के शब्द से उड़ाकर पार्वती को मन्त्रोपदेश करते हैं, उस मन्त्रोपदेश काल में पार्वती को नींद आ जाती है, किन्तु वहाँ एक घोंसले में रक्खे हुए शुक को अण्डों में चेतनता का संचार हो जाता है और वह हुंकार शब्द के उच्चारण के साथ मन्त्रके समस्त रहस्य को जान लेता है। शंकर पार्वती से जब मन्त्र श्रवण के विषय में प्रश्न करते हैं तो वह अपने निद्रित होने की बात कहकर उन्हें पुनः मन्त्रोपदेश के लिये प्रेरित करती हैं। साथ ही वह शुक उड़कर आकाश में चला जाता है। आदि-आदि अधिक सुन्दर प्रसंग का वर्णन हुआ है। ७-८-९ पृष्ठों में यही सब देखने में आता है।

नन्दोत्सवः

नन्दगृहे जातं पुत्रं श्रुत्वा देवा महानुत्सवं चक्रुः।

१. नन्द यशोदाया जातोत्सवः।

२. नन्दगृहे विप्राणां दक्षिणा प्राप्त्या मनः आनन्दं प्राप।

३. वैकुण्ठादिलोकानां यत् आनन्दस्तत् नन्दगृहे जातं तेन नन्दः।

४. सकलान् लोकान् नन्दयतीति नन्दः।

५. सकल व्रजवासीनामानन्दं ददातीति नन्दः।

६. श्रीकृष्ण जन्मना ब्रह्मानन्द सुखं ददातीति नन्दः।

७. स्वयं नन्दति अन्यान्नन्दयतीति नन्दः।

८. नन्दति भ्रातृ-श्रीवसुदेव-पुत्र-जन्मोत्सवेनेति नन्दः।

अष्टादशश्लोकचयैः　　परंतत्
　　　　कथंजगौ　तादृश सन्मुनीन्द्रः ।
अत्रापितात्पर्यमलं　　विधेयं
　　　　प्रसङ्गमुख्याद्धि यथा यथा हि ॥

अष्टादशश्लोकेषु नन्दोत्सवः

१. श्रेयांसि बहुविघ्नानीति विमृष्य श्रीनन्दराजो यथा देव-पितृ-दिक्पाल-ग्रहादीन् पूजादिभिः प्रसादयामास तथैवदेशाध्यक्षं दुष्ट नृपं कंसमपि स्वर्णमुद्रारत्न वस्त्राद्युपहारैः प्रसादयितुं वार्षिककर दानमिषेण तत्समीपं गन्तुं विचारयति। अतः संक्षेपेणैव शुकः नन्दोत्सवमाह ।

२. शुकदेवो विचारयति यदहं भगवतः श्रीकृष्णचन्द्रस्य जन्ममहोत्सव-वर्णनं कोटिश्लोकैर्लक्षश्लोकैः सहस्त्रैश्च कथयामि तन्न युक्तम् यतः राज्ञः परीक्षितस्य मृत्युः समीपवर्ती । अतः—अष्टादश श्लोकैर्महोत्सव मवर्णयत् ।

३. अष्टादश श्लोक संख्या अष्टादश-वीजवर्णाभिप्रायिका ।

४. पुराणानां संख्या अष्टादशैव, अतः प्रत्येक-

श्लोकः पुराण प्रतिनिधिरेव । प्रतिश्लोके पुराण श्रवण-फलमिति ।

५. महाभारते पर्व संख्याअष्टादशैवातोऽष्टादश संख्याऽत्र ।

६. कल्पानां संख्या ऽप्यष्टादशैवातो ऽष्टादश-संख्या ।

७. संहितानाम् संख्याप्यष्टादशैवातो ऽत्राष्टादश संख्या ।

८. स्व गुरूपदिष्टा अष्टादशाक्षर श्रीमन्त्रराजरूपा ।

९. भगवद्गीतायामष्टादशाध्यायास्तथाऽत्रापि तद्वन्महत्त्वम् ।

यतत्वमष्टादशपर्वमध्ये
व्यासेनप्रोक्तं पुनरेवमन्त्वात् ।
कृष्णार्जुनः प्रस्तुतमध्यमध्ये
अध्यायके दिग्वसुसंख्ययोक्तैः ॥
तथैव श्रीभागवतेविदिग्वसु
सहस्रसंख्यामिति पद्यमध्ये ।
तथाष्टदिक् सर्वपुराण मध्ये
तत् संहिता सास्मृतिमानमध्ये ॥

नन्द-महोत्सव के इस प्रसंग में नन्द शब्द का अर्थ प्रकट करते हुए १८ श्लोकों द्वारा जो उस उत्सव का वर्णन किया गया है, यहाँ उस अट्ठारह संख्या का प्रयोजन बतलाया गया है। जिसमें पुराणों की १८ संख्या, महाभारत के १८ पर्वों की संख्या, कल्पों की १८ संख्या, संहिताओं की १८ संख्या, गुरूपदिष्ट १८ अक्षर वाले मन्त्रके १८ अक्षरों की संख्या या बीज मन्त्रों की संख्या, गीता के १८ अध्यायों की संख्या वतलाई गई है जो अट्ठारह नन्दोत्सवों के श्लोकों की प्रतिनिधि रूप है।

कोऽयं नन्दः

सर्वश्रुति पुराणादि कृतप्रशंसस्य वृष्णि वंशस्यावतंसः श्रीदेवमीढनामा परमगुणधामा मथुरायाम् न्यवसत्। तस्य चार्याणांशिरोमणेर्भार्याद्वयमासीत्। प्रथमा द्वितीयवर्णा (क्षत्रिया), द्वितीया तु तृतीयवर्णा (वैश्या) तयोश्च क्रमेण यथावदाह्वयं पुत्रद्वयं प्रथमं बभूव शूरः पर्जन्य इति। तत्रशूरस्य श्रीवसुदेवादयः समुदयन्तिस्म। श्रीमान् पर्जन्यस्तु "मातृवद्वर्णसङ्करः" इतिन्यायेन वैश्यतामेवाविश्य गवामेवैश्यं वश्यं चकार। बृहद्वन एव च वासमाचचार। सचायं बाल्यादेव ब्राह्मण दर्शं पूजयति, मनोरथ पूरं देयानि वर्षति, वैष्णवेवेदं स्निह्यति, यावद्वेदं व्यवहरति, यावज्जीवं हरिमर्थयतिस्म। तस्य मातुर्वंशश्च व्याप्त सर्वदिशां विशां वतंसतया पर-

शंसनीयः आभीर विशेषतया सद्भिरुदीरणाद्देष हि विशेषं भजतेस्म । तथा च मनुस्मृतौः—

ब्राह्मणादुग्रकन्यायामावृतो नाम जायते ।
आभीरोऽम्बष्ठ कन्यायामायोगव्यान्तु धिग्वणः ।।

(मनु० १०।१५)

अम्बष्ठस्तु विशः पुत्र्यां ब्राह्मणाज्जात उच्यते । इति चान्यत्र ।

यज्ञं कुर्वता ब्रह्मणाप्याभीरपर्याय गोप कन्यायाः पत्नीत्वेन स्वीकारः प्रसिद्धः । एष एव च गोपवंशः श्रीकृष्णलीलायां सम्बलनमाप्स्यतीति पाद्मे सृष्टिखण्डे सुस्पष्टम् । तस्मात्परम शंसनीय एवासौ वैश्यान्तः पाति महाभीरद्विजवंश इति[१] ।

कुरुद्विजाति संस्कारम् (भा० १०।८।१०) वैश्यस्तु वार्तया जीवेत् [भा० १०।२४।२०-२१) श्रीकृष्णवचने तथैव अग्न्यर्कातिथि गोविप्र [१०।४६।१२] शुक वर्णनेन सुस्पष्टत्वादेषां द्विजत्वे सन्देहो नास्ति ।

स च पर्जन्यो मान्यतया वदान्यतया क्षीर वैभव प्लावित सर्व जनतालब्धप्राधान्यतया च पर्जन्य सामान्यतामाप । यः यं खलु श्रीमदुग्रसेनाग्रीय यदु

---

१. गोपाल चम्पू पृ० ८४

संसदग्रगण्यस्ते समग्र गुणगरिमण्यग्रगण्यमवलोकयन्तः सकल गोपलोक राजराजता सम्वलकेन तिलकेन सम्भावयामासुः। यस्य च प्रेयसी सकलगुणवरीयसी वरीयसी नामासीत्। यस्य च श्रीमदुपनन्दादयः पञ्च-नन्दनाजगदेवानन्दयामासुः।

उपनन्दोऽभिनन्दश्च नन्दः सन्नन्दनन्दनौ।
इत्याख्याः कुर्वता पित्रा नन्देरर्थः सुदण्डितः॥

केनचन सुमुखेन गोपानां मुखेन तस्मै परमधन्या 'यशोदा' कन्यादत्ता। यथा पर्जन्य-उपनन्दं राजतया सभाजयामास तथैवोपनन्देन नन्दो गोकुलराज पदे सभाजितः।

कालान्तरे जाते कंसभयेन गोकुले वसुदेवः स्वकीयां पत्नीं रोहिणीं नन्द संरक्षणे प्रेषयामास।

बलदेव जन्मवर्णनम्

यस्मिन् समये वसुदेवेन प्रहिता व्रजहिता वडवा-रोहिणी-"रोहिणी" गृहमाजगाम तस्मिन्समये सर्व एव व्रजराज समाजः शुभशकुन संकुल शकुनादि समजेन सममुल्ललास तत्र चानन्दमोहिन्यौ श्रीयशोदा रोहिण्यौ यमुना-गङ्गे इव सङ्गतसङ्गे परस्परं परेभ्यश्च सुख-समूहमूहतुः।

व्रजराज पत्नी च तस्या ज्येष्ठमवष्टभ्य मासत्रय जातमन्तर्वत्नीत्वं पर्यालोच्य स्वाभेदवेदनेनैव शातजातं प्राप ।

अथ माघ मासि चासित प्रतिपदि कृत सर्व सुख प्रसरजन्यां रजन्यां सा व्रजराजं सेवमाना तन्द्रा परतन्त्रायमाणा स्वप्न तुल्यता-सञ्चितं किञ्चिदञ्चितं ददर्श । योगमाया रोहिण्याः साप्तमासिकं गर्भंरूस्तं विधाय देवक्यास्तद्विधं तं तस्यां नियोजयामास । ततश्च लब्ध सर्वसमय सम्पद्दशे चतुर्दशेमासि [ज्येष्ठ मासे, गर्भाधानत्वात् श्रावणमासे] श्रावणतः प्राक् श्रवणर्क्षे

इस प्रसंग में वृष्णि वंशावतंस देवमीढ के वंश वर्णन के अवसर पर उनकी क्षत्रिया और वैश्या दो भार्याओं से उत्पन्न होने वाले शूर और पर्जन्य नामक २ पुत्रों में पर्जन्य के उपनन्दादि ५ पुत्रों में तृतीय नन्द के वंश का वर्णन किया गया है। जिसके लिए सुमुख नामक किसी गोप ने अपनी यशोदा नामक कन्या दी थी और ज्येष्ठ भ्राता पर्जन्य ने उसको गोकुलेश के रूप में सम्मान किया था तथा वसुदेव ने अपनी रोहिणी नामक पत्नी को उनके संरक्षण में रख दिया था। जिसको तीन मास का गर्भ था, जिसे सातवें मास में गिर जाने पर भगवान् के अंश के उसी समय न्यास से भगवान् बलराम का जन्म हुआ था।

समस्त सुखरोहिणी रोहिणी गुणगणनयासुषमं सित-सुषमं सुतं सान्द्रशुभ्रताविभ्राजमानतया पौर्णमासी चन्द्रमसमिव, दर्शित-विक्रम-क्रमतया सिंह वधूशावक-मिव, निर्मल परिमल धाराधारतया नवकमलिनी धवल-कमलमिव सुषाव ।

शुभांशु वक्त्रंतडिदालि लोचनं ।
नवाब्दकेशं - शरदभ्र - विग्रहम् ।।
भानुप्रभावं तमसूत रोहिणी ।
तत्तच्च युक्तं स हि दिव्य बालकः ।।

गो० पृ० १००

अन्यत्र

दिनान्तरे कतिपयै तु, रोहिणी नन्द मन्दिरे ।
सूते स्म पुत्रं कृष्णांशं, तस रौप्याभमीश्वरम् ।।
ईषद्धास्य-प्रसन्नास्यं, ज्वलन्तं ब्रह्म तेजसा ।
तस्यैव जन्म मात्रेण देवा मुमुदिरे मुने ! ।।
स्वर्गे दुन्दुभयो नेदुरानका मुरजादयः ।
जय शब्दं शंख शब्दं चक्रुर्देवा मुदान्विताः ।।

बलराम के जन्म के अवसर पर देवलोक में भी आनन्द मनाया गया और नन्द ने प्रसन्नता से ब्राह्मणों को पर्याप्त धन का दान किया ।

नन्दो हृष्टो ब्राह्मणेभ्यो धनं बहुविधं ददौ[1] ।

वसुदेवस्य चतुर्दश पत्न्य आसन् तासु पञ्चपौरव वंशीया आसन्-रोहिणी-इन्दिरा, वैशाखी, भद्रा-सुनाम्नी च । देवलपुत्र्यः सप्त-सहदेवा-शान्तिदेवा-श्रीदेवा देव-रक्षिता-वृकदेवी उपदेवी-देवकी च, द्वे परिचायिके-सुतनु, वडवा आस्ताम् । शान्तनोर्ज्येष्ठभ्रातुर्वाल्हिकस्यात्मजासीत् रोहिणी ।

पौरवी रोहिणी नाम वाह्लिकस्यात्मजाऽभवत् ।
ज्येष्ठा पत्नी महाराज दयिताऽऽनक दुन्दुभेः ॥

[हरि० पु० ३५४]

रोहिण्यां वसुदेवः दश जनयामास—ते च वल-रामः, सारणः, शठः, दुर्दमः, दमनः, श्वभुः पिण्डारकः, उशीनरः । चित्रानाम्नी कन्या जन्म ग्रहण समयएव मृता । मरणसमये श्रीकृष्ण चरित दर्शनेऽनुरागत्वात्सैव सुभद्रा जाता ।

हरिवंशे तु कंसः निःसृतान् षड्गर्भानशिलातले जघान । सप्तमं गर्भं रोहिणी जठरे योगमाया निनाय ।

१. ब्र० वै० पु०

रजस्वला रोहिणी अर्धरात्रिसमयेगर्भं पातयन्ती सहसा निद्रयाविष्टा धरणीतले पपात । आत्मनः गर्भं स्वप्नमिव निःसृतंदृष्ट्वा गर्भ-अपश्यन्ती मुहूर्तं व्यथिताभवत् ।

निद्रयैवास्यगर्भस्य सङ्कर्षण इति नाम चकार—

कर्षणेनास्य गर्भस्यस्वगर्भे चाहितस्य वै ।
संकर्षणो नाम सुतः शुभे तव भविष्यति ।।
सा तं पुत्रमवाप्यैवं हृष्टा किंचिद्वाङ्मुखी ।
विवेशरोहिणी वेश्म सुप्रभारोहिणी यथा ।।
तस्य गर्भस्य मार्गेण गर्भमाधत्त देवकी ।
यदर्थं सप्त ते गर्भाः कंसेन विनिपातिताः ।।
तं तु गर्भं प्रयत्नेन ररक्षुस्तस्य मन्त्रिणः ।
सोऽप्यत्र गर्भं वसतौ वसत्यात्मेच्छया हरिः ।।
यशोदापि समाधत्त गर्भं तदहरेव तु ।
विष्णोः शरीरजां निद्रां विष्णुनिर्देश कारिणीम्।।
गर्भकाले त्वसम्पूर्ण अष्टमे मासि ते स्त्रियौ ।
देवकी च यशोदा च सुषुवाते समं तदा ।।

वसुदेवजी की १४ रोहिणी आदि पत्नियों तथा उनकी संतति का वर्णन हुआ है ।

यामेव रजनीं कृष्णो जज्ञे वृष्णि कुलोद्वहः ।
तामेव रजनीं कन्यां यशोदापि व्यजायत ॥
नन्दगोपस्य भार्यैका वसुदेवस्य चापरा ।
तुल्य कालं च गर्भिण्यौ यशोदा देवकी तथा ॥
देवक्यजनयद् विष्णुं यशोदा तां तु दारिकाम् ।
मुहूर्ते ऽभिजिति प्राप्ते सार्धरात्रविभूषिते ॥

× × ×

अभिजिन्नाम नक्षत्रं जयन्ती नामशर्वरी ।
मुहूर्तो विजयो नाम यत्र जातो जनार्दनः ॥

[हृ० विष्णुपर्व ४३]

बलराम विवाहः रेवत्या सह जातः तस्याः सकाशात् निशठ नामकः पुत्रोऽपिजातः । उल्मुकोऽपि वलराम पुत्र इति पुराणान्तरे । तथा च "बलभद्रस्यपुत्रौद्वौ यादवौ निशठोल्मुकौ ।"

भाद्र मासेऽपि जन्म वर्णनम् वलदेवस्य लभ्यते तंद्यथा—

नन्दगोप की पत्नी यशोदा तथा वसुदेव की पत्नी देवकी ने अभिजित् मुहूर्त में आधी रात के समय योगमाया कन्या और कृष्ण पुत्र को जन्म दिया ।

इत्थं गते पंच दिनेषु भाद्रे
　　स्वातौ च षष्ठ्यां चसिते वुधे च ।
उच्चग्रहैः पंचभिरावृते च
　　लग्ने तुलाख्ये दिन मध्य देशे ॥

× × ×

भाद्रपद मासस्य शुक्लपक्षस्य षष्ठ्यां तिथौ वुध-वासरे मध्याह्न समये पञ्चोच्च ग्रहैरावृते तुलाख्ये लग्ने जन्म—

सुरेषु वर्षत्सु सुपुष्प वर्षा
　　घनेषु मुञ्चत्सु च वारिविंदून् ।
वभूव देवो वसुदेव पत्न्यां
　　विभासयन्नन्दगृहं स्वभासा ॥

× × ×

नन्द गृहे रोहिणी निवासत्वात् नन्दगोप एव जात-कर्म दानादिकञ्चाकरोत्—

नन्दोऽपि कुर्वन् शिशु जात कर्म
　　ददौ द्विजेभ्यो नियुते गवांच ।
गोपान् समाहूय सु गायकांश्च
　　रावैर्महामंगलमाततान ॥

गर्गसंहितानुसारम् देवक्याः गर्भे नष्टे जाते षष्ठे दिवसएव बलराम जन्म। नन्दः प्रसन्नमना दशलक्ष गोप्रदानं ब्राह्मणेभ्यश्चकार। बलराम जन्मोत्सव समारोहे देवल-देवरात-वसिष्ठ-वृहस्पति-नारद-वेदव्यास-प्रभृतयोमुनयो जग्मुः। श्रीनन्दरायोऽपृच्छच्च यदस्य शिशोर्जन्म पंच दिवसेष्वेव कथमिति ? तदा श्रीवेद-व्यासः प्राह। पूर्वमयं शिशुः देवकीगर्भे ततः रोहिणी गर्भे समागतः। अहं तु शेषावतारस्यास्य बालस्य दर्शनार्थमेवात्रागतः। धन्यो भवान् धन्याश्चात्र निवासिनः। बालोऽयं देवाधिदेवः। प्रलम्बहन्ता। रुक्म्यरिः। कूपकर्णारिः। वल्वल प्राणहर्ता। कालिन्दी भेदनः। हस्तिनापुर कर्षकः। द्विविदवानरहन्ता। कंसानुजप्रहन्ता। तीर्थयात्रानुरागी दुर्योधनगुरुः—

देवाधिदेव भगवन्कामपालनमोऽस्तुते।
नमोऽनन्ताय शेषाय साक्षाद्रामाय ते नमः॥
धराधरायपूर्णाय स्वधाम्ने क्षीरपाणये।
सहस्रशिरसे नित्यं नमः संकर्षणाय ते॥

इस प्रसग में रेवती के साथ बलराम का विवाह होने पर निशठ और उल्मुक नामक दो पुत्रों का वर्णन हुआ है तथा नन्द के घर में जन्म होने के कारण बलराम के सभी जात-कर्मादि संस्कारों का वर्णन किया गया है।

रेवतीरमणत्वं वै बलदेवोऽच्युताग्रजः ।
हलायुधः प्रलम्बघ्नः पाहि मां पुरुषोत्तम ।।
बलाय बलभद्राय तालांकाय नमोनमः ।
नीलाम्बराय गौराय रौहिणेयाय ते नमः ।।
धेनुकारिर्मुष्टिकारिः कुंभाण्डारिस्त्वमेवहि ।
रुक्म्यरिः कूपकर्णारिः कूटारिर्बल्वलान्तकः ।।
कालिन्दी भेदनोऽसि त्वं हस्तिनापुरकर्षकः ।
द्विविदारिर्यादवेन्द्रो व्रजमंडलमंडनः ।।
कंसभ्रातृ प्रहन्तासि तीर्थयात्राकरः प्रभुः ।
दुर्योधनगुरुः साक्षात्पाहि पाहि प्रभो जगत् ।।

जय जयाच्युतदेव परात्पर स्वयमनन्तदिगन्तगत-

---

१ गर्ग संहिता के अनुसार देवकी के सातवें गर्भ के नष्ट होने के छठें दिन बलराम जन्म का प्रसंग आया है। जिसमें प्रसन्नता से नन्द ने दस लाख गायों का दान किया है। श्रीवेद व्यासजी के अनुसार यह बालक पहले देवकी के गर्भ में आया था अनन्तर रोहिणी के गर्भ से उत्पन्न हुआ है। जैसा कि आपने नन्दराय के प्रश्न के उत्तर में कहा है। अनन्तर इसी पृष्ठ पर बलराम के कर्मानुसार कुछ नामों का वर्णन हुआ है।

क्षुतसुर मुनीन्द्र फणीन्द्रवरायते मुसलिने बलिनेहलि-नेनमः ।

इह पठेत्सततंस्तवनन्तुयः ।
स तु हरेः परमं पदमाव्रजेत् ॥
जगति सर्वं वलं त्वरि मर्दनं ।
भवतितस्य जयः स्वधनं धनम् ॥

नारद उवाचः—

वलंपरिक्रम्यशतं प्रणम्य त—
द्वैपायनो देवपराशरात्मजः ॥
विशाल वुद्धिर्मुनिबादरायणः ।
सरस्वतीं सत्यवती सुतो ययौ ॥

[गर्ग सं० गोलोकखण्डे १० अ०]

नाक्षत्रिकैस्तु जन्मपत्रिकावाचनं कृतम् तद्यथा तुलाराशिः । लग्नोऽपि तुलाख्यः । लग्नएव शुक्र-शनि-योगः । तृतीयेकेतुः, चतुर्थे भौमः । दशमेगुरुः । नवमे-राहुः । एकादशे सूर्यः । द्वादशे कन्यायां बुधः ।

तुलास्थास्तनाविन्दु शुक्रार्कपुत्रा ।
इभं रोहिणी नंदनं मध्य पञ्च ॥

कलाकोविदं कामिनी केलिकामं ।
करिष्यन्ति देशाधिपं मानवेन्द्र ।।

[संगृहीतः]

स सानन्दमुवाच-सङ्गतंब्रवीषि, ममाप्युत्कण्ठांकुरितं स्फुरितमेतदेवासीत् । तस्मादद्यारभ्य समारभ्यतामेषव्रत इति ।

तेन व्रतेन पूर्णे वर्षे वृंहिते च तर्षे युगपदेव देवदेवः स्वप्ने तयोराविर्बभूव, चोवाच च—अहो ! मय्यतिसक्तौभक्तौ कथं निर्विद्यखिद्याथे ? अचिरादेव च रुचिरा रुचिरेषायुवयोः सफलतां वलिता ।

कालान्तरे गर्भलक्षण परिपूर्णासाऽभवत्—

मुखमापाण्डुकुचाग्रं स्फीतं जठरं दरोत्तुङ्गम् ।
अभजत कर्णं जपतां गर्भे वृत्ते यशोदायाः ।।

ज्योतिष के विद्वानों द्वारा जन्म-पत्रिका कथन और निर्माण हुआ है, जिसमें उच्चस्थ सभी ग्रहों का फलादेश कहा गया है । अनन्तर नन्द अपने स्वप्न की बात यशोदा से कहते हैं, जिसमें उन्होंने कमल-दल लोचन श्यामसुन्दर किसी बालक का साक्षात्कार किया है, जिसे सुनकर यशोदा भी अपनी सम्मति प्रकट करती हैं और उस देव की सेवा के लिए द्वादशी का व्रत करने की अभिलाषा प्रकट करती है ।

व्रजराज्ञ्या स्फुरितात्मा,
कृष्णः स्फुरितस्म लोकेऽपि ।
दीपः स्फटिकघटीभागन्त-
र्वहिरपिविभाति तत्तुल्यः ॥
ऐहतदोहदमेषा, कृष्णावेशाविशत्तृष्णा ।
तुलसी संस्कृतधृतयुक् स सितु
सितकान्तिगन्धि परमान्नम् ॥
अष्टाविंश चतुर्युगे कलिशिरः संमर्द्य वैवस्वत ।
भाद्रान्तर्बहुलाष्टमी मनुविधोः पुत्रे विधोरुद्गमे ॥
योगेहर्षण नाम्निशुद्धविधिभे पूर्णः परः श्रीविधु-
र्नन्दन्नन्दवधू - मुदेस्वयमुदैदह्नायधुन्वंस्तमः ॥

× × ×

तदा युगादिदेवास्तु स्व स्व सम्पदुपायनम् ।
आदाय कृष्णजन्मर्क्षं निशामाशु सिषेविरे ॥

भगवतः प्रादुर्भाव समये श्रीमद्भागवते दशमे तृतीयाध्याये 'अथ सर्व गुणोपेतः कालः परम शोभनः' इत्यादिना प्रकृति विरुद्धत्वन्निगदितम् । अत्रापि किञ्चिद्-वर्ण्यते:—

विबभूव विना सत्यं ध्यानं, त्रेतां विनामखः ।
विना द्वापरमभ्यर्चा, हरेर्नाम कलिं विना ॥
विना मधुं सप्तलादि विनोष्णं पाकिमाभ्नता ।
विना शरदमम्बु श्रीः शालिस्तस्याः परं विना ॥
शिशिरेण विनामाध्यं विनाह्लाम्बुजविस्तृतिः ।
विनागुरु प्रभावेण सर्वत्र स्फुरणं हरेः ॥
विनासूति प्रतीत्या च प्रसूतौऽसौ यशोदया ॥

[गो० च० तृ० ८५]

मध्ये तारावार सारं नभस्तत्
प्रान्ते सिन्धूर्ध्वं ध्वनन्मेघ बन्धुः ।
इत्थं वर्षाधाम तर्षा शरच्छ्री-
स्तस्यांतिथ्यां तथ्यमातिथ्यमाप ॥

किञ्चमुखेनमहापद्मं विजेता, नयनाभ्यां पद्मं, नासिकया मकरम्, स्मितेन कुन्दम्, कण्ठेन शङ्खम्, चरणयोः पृष्ठाभ्यां कच्छपम्, रुचानीलम्, सर्वैरेव च सर्वेषां सर्वम् ।

उस द्वादशी व्रत के पूर्ण होने पर देव-देव का स्वप्न में दर्शन वर्णित हुआ है, अनन्तर उनके स्वप्न दर्शनानुसार भगवान् के आविर्भाव का वर्णन है ।

ददृशे च प्रबुद्धा सा यशोदा जातमात्मभजम् ।
नीलोत्पल-दल-श्यामं ततोऽत्यर्थं मुदं ययौ ॥

× × ×

साम्राज्यं श्यामभासांविधिरपि
तदिदं रूपरत्नाकराणाम् ।
भाग्यं लावण्यभाजां विलसित
निगमस्तत्तदङ्गावलीनाम् ॥
एवं मीमांसमाना व्रजपति
दयिता यावदास्तेस्मतावत् ।
क्रन्दन्नोमोमितीत्थं नव शिशु-
रसकौ तद्ध्रुवं स्वीचकार ॥
दृष्ट्वा पुत्रमसौ व्रजेश गृहिणी-
सद्यः प्रजातंसखी ।
राहूता न शशाक कर्तुमपि
चेदास्तां परं चेष्टितम् ॥
अस्रै रावृतमक्षिकण्ठमथयत्
स्तब्धञ्च तस्या वपु-

स्तस्मिल्लालन लालसावशतया
　　　　　　　　　　चात्मात्मना व्यग्रितः ॥

यदा योगमायागता तर्हि व्रजे जनः मोहं जहौ । स्निग्धानां चित्तेषु स्वच्छेषु प्रतिबिम्बवत् स्फुरतिस्म ॥

वृद्धा ब्राह्मणी प्रथमं पुत्रोत्सव सूचनां दत्तवती । वृद्धपौराणिकरीत्या नन्दस्यभगिनी सुनन्दया सर्वप्रथमं सूचना दत्ता । नन्दः महार्घहारं स्वकण्ठतः गृहीत्वा तस्यैददौ ।

वृद्धा ब्राह्मणीप्राह—निजाङ्ग जात एव भवान् मङ्गलसङ्गीभूयात् । ततः सा रोचना कुंकुम सङ्गलेप संकुल सदंकुर फलमंगले श्रीमद् व्रजराजस्य क्षेमङ्कार करयोर्विन्यस्ते तेन विलोकित कल्पः श्रीमानुपनन्दः सानन्दं जल्पतिस्म—इह दोहाय संहाय रंहसायमाना धेनुसंघाः कामप्यविहाय द्रुतमस्याः सगृहाय विहाप्यन्ताम् ।

प्रादुर्भूत बालक के सौन्दर्य का वर्णन किया है, जिसे देखकर चैतन्य हुई यशोदा अत्यधिक प्रसन्न होती है ।

आल्हादेन समं जज्ञे बालः किं किं स एव सः ।
एवं विवेक्तुं नन्दस्य नासीन्मतिमतोमतिः ॥

अथ श्रीमान् व्रजेशः स्वीकृत धार्मिक वेषस्तदापि-बहुलमन्यदपि बहुलादिकं दानाय संचक्लृपे। तच्च वाद्यविद्या विदुरभ्यञ्जितं वाद्यं व्यक्तमेवेदं मुहुर्वक्तिस्म "प्रादुर्भूतो नन्दानन्दः प्रादुर्भूतोनन्दानन्दः" सुखावहं वृत्तान्तममुं श्रुत्वा सर्वे गोपवृन्दा नन्दालयमागताः ।

तद् वृन्देगृहमभियाति बन्धुवर्गो ।
धावन्तः क्रममिलिता मिथः पुरोगाः ॥
ये गंगाझरमनु-निर्झर प्रभेदा ।
यद्वत्तत्तुलिततयानयन्त वृद्धिम् ॥

पुरवनिताः सहस्रशः कलितशु भायुतायुताआगताः ।

यशोदा के घर योगमाया के जन्म से सभी व्रजवासी मोहित थे, किन्तु जब उसे वसुदेवजी अपने साथ ले गये और यशोदा के सभी बालकृष्ण प्रकट हो गये तो किसी वृद्धा-ब्राह्मणी से पुत्र जन्म की सूचना पाकर नन्द की बहिन सुनन्दा ने अपने भ्राता नन्द को यह पुत्र जन्म की सूचना दी । नन्द ने भी तुरन्त ही उसे अपने गले से उतार कर उपहार स्वरूप हार दिया और गोदानादि अनेक प्रकार के दान दिये ।

गोप्यः सुमृष्ट मणि कुंडल निष्ककण्ठ्य-
शिचत्राम्बराः पथि शिखाच्युत माल्यवर्षाः ।
नन्दालयं सवलया व्रजतीर्विरेजु-
र्व्यालोल कुण्डल पयोधर हार शोभाः ॥

[अ० १०]

श्रीनन्दराज सुत संभवमद्भुतं च ।
श्रुत्वा विसृज्य गृहकर्म तदैव गोप्यः ॥
तूर्णं ययुः स बलयोर्व्रजराजगेहान् ।
नद्यत् प्रमोद परिपूरित हृन्मनोङ्गः ॥
आनन्दमन्दिर पुरात्स्वगृहाद्व्रजन्त्यः ।
सर्वा इतस्तत उतत्वरमाव्रजन्त्यः ॥
यानश्लथद्वसन भूषण केशबन्धाः ।
रेजुर्नरेन्द्रपथिभूपरिभुक्त भुक्ताः ॥
झंकारनूपुर नवांगद हेमचीर-
मंजीर हार मणि कुंडलमेखलाभिः ॥
श्रीकंठसूत्र भुज कंकण बिंदुकाभिः ।
पूर्णेन्दुमंडल नवद्युतिभिर्विरेजुः ॥

[गर्ग० गो० १२]

श्रीराजिका लवण रात्रिविशेष चूर्णै-
र्गोधूम सर्षपयवैः करलालनैश्च ॥
उत्तार्य बालक मुखोपरि चाशिषस्ताः ।
सर्वादिदुर्नृप जगुर्जगदुर्यशोदाम् ॥

गोप्यःऊचुः–"श्लोकः"–साधुसाधुयशोदेति दिष्ट्या-दिष्ट्या व्रजेश्वरी । धन्याधन्यापरा कुक्षिर्यययायं जनितः सुतः ॥

तदा यशोदा रोहिणींप्राह—हे रोहिणि । त्वं सर्वं जानासि अतः समागतानां सर्वेषां तथा जातकर्मादि विषये ईप्सितं कुरु । गौरवर्णा दिव्यवासा रत्नाभरण भूषिता च रोहिणी व्रजौकसान् पूजयन्ती व्यचरत् । तथा नापितमाहूयाकथयत् त्वं व्रजेगच्छ ! सर्वेषां गेहे गत्वा व्रजरायमहोत्सवामन्त्रणसूचनां दत्वाऽऽगच्छ ।

नापितस्तु यस्ययस्य गृहे गच्छति श्रावयति च नन्दरायगृहे पुत्रोत्सव महोत्सवम् गृह्णाति वस्त्राभरणानि । अशक्यत्वात्तानि वस्त्राणि मार्गे निक्षिपति रजतमात्रमेव गृहीत्वा गच्छति । यदा सुवर्णालंका-

---

नन्द के घर पुत्र जन्म के वृत्तान्त को सुनकर सब गोप-वृन्द एकत्रित हुए तथा गोपियाँ भी सज-सजकर वहाँ उपस्थित होने लगीं ।

राणि एकत्रितानितदारजतमयानि-आभरणानि त्यक्तानि सुवर्णमयानि गृहीतानि । गोप्यः प्रसन्नतापूर्वकं हर्ष पूर्णाः रत्नानिददुः । तदा स नापितः सुवर्णाभरणानि गोकुले त्यक्त्वाहीरक-मौक्तिकादीनि गृहीत्वा प्रसन्नमनोऽग्रे गच्छति । सर्वत्र गोकुले कोलाहलः संजातः ।

न केवलं गोप्यएव अपितु सर्वे गोपाः परस्परं धन्यमुखाः नन्दालयमाजग्मुः । नन्दोऽपि महार्घमुष्णीषं शिरसि निधाय कज्जलादिना वदनमण्डनं विधाय प्राङ्गणे समागतः । गोप्यः दुग्ध दधि नवनीतादि वस्तुभिः प्राङ्गण गर्तं प्रपूर्य तस्मिन् हरिद्रा-केशर कस्तूरिका चूर्णं प्रक्षिप्य परस्परं चिक्षिपुः । वृषभानुः सर्वान् गोपान् नीत्वा नन्दराज गृहे समागतः । वृषभानुः

सुन्दरतम बालक को किसी की नजर न लगे इस बचाव के लिए वे राई नौन उतारने लगीं और अपने को धन्य भाग्य समझने लगीं तथा रोहिणी आगन्तुकों का सत्कार करने लगी एवं नाई को भेजकर पूरे व्रज में इसकी खबर दी। नाई को अपने इस कार्य में अर्थात् नन्द के घर पुत्र जन्म की खुशी की सूचना पाने वाले लोगों से पर्याप्त धन की प्राप्ति हुई तथा गोप-वृन्द सज-सजकर नन्द के आँगन में पहुँचने लगे ।

नन्दराजश्च परममित्रौ आस्ताम्, एकदा वृषभानुः प्राह मित्र ! यदि तव गृहे पुत्रीमम गृहे पुत्रः स्यात् तदा मम पुत्रेण साकं तव कन्योद्वाहः। नन्दः प्राह यदि तव गृहे कन्या स्यान्ममगृहे पुत्र स्तदा त्वं दास्यसि स्वकीयां कन्याम्। वृषभानु गृहे तु प्राक् राधा समभवत्। यदा तेन श्रुतं यन्नन्दगोप गृहे पुत्रोजातस्तदा स नाना वस्तूनि ददन् गोकुलं प्राप।

श्रुत्वा पुत्रोत्सवं तस्य वृषभानुवरस्तथा।
कलावत्या गजारूढो नन्दमन्दिरमाययौ ॥
नन्दानवोपनन्दाश्च तथा षट् वृषभानवः।
नानोपायन संयुक्ताः सर्वे तेऽपि समाययुः ॥

[गर्ग० गो० १२]

नन्दराज अपने आँगन में आगन्तुकों को देखकर बहुमूल्य पगड़ी तथा नेत्रों में कज्जलादि से अपना मुख तथा शरीर सजाकर आँगन आ गये तथा वृषभानु भी अपने गाँव के सब गोपों को साथ लेकर वहाँ पहुँचे, क्योंकि यह दोनों परस्पर अधिक घनिष्ठ मित्र थे और इन दोनों में यह बात तय हो चुकी थी कि एक दूसरे के घर पुत्र या पुत्री का जन्म होने पर परस्पर विवाह सम्बन्ध करेंगे। इसलिए वृषभानु नन्द के घर पुत्र जन्म सुनकर अनेक प्रकार की सामग्रियों के साथ हाथी पर सवार होकर नन्द के आँगन में उपस्थित हुए थे।

उष्णीषोपरिमालाढ्या पीतकंचुक शोभिता बद्ध-केशवनमाला विभूषिता बंशीधरा वेत्रहस्ताः सुपत्रतिल कार्चिताः बद्धवर्ण परिकराः सर्वे समाययुः ।

बालाः नानावेषधराः नृत्यन्तः गायन्तः वसनानि धुन्वन्तः नानोपायनसंयुक्ताः श्मश्रुलाः हय्यंगवीन दुग्धानां दध्याज्यानां बहून्बलीन् नीत्वा यष्टिहस्ता नन्दमन्दिरमाययुः । ते परस्परं व्रजेशस्य पुत्रोत्सव आनन्दाश्रुसमाकुलाः प्रेमविह्वल भावाः कथयन्ति ।

जाते पुत्रोत्सवे नन्दः स्वानन्दाश्रुकुलेक्षणः ।
पूजयामास तान् सर्वान् तिलकाद्यैर्विधानतः ॥

गोपाः प्रोचुः—अतः परं मंगलंकिम् । हे व्रजेश्वर ! हे नन्द! अद्य पुत्रोत्सवोजातः । दैवेन दर्शितं चेदंदिनम् ।

दैवेनदर्शितं चेदं दिनं वो बहुभिर्दिनैः ।
कृतकृत्याश्च भूयास्मो दृष्ट्वा श्रीनन्दनन्दनम् ॥

[गर्गं० गो० १२]

नन्दः प्राह—

भवताभाशिषः पुण्याज्जातं सौख्यमिदं शुभम् ।
आज्ञावर्ती ह्यहं गोपगोपीनां व्रजवासिनाम् ॥

श्रीमद्भागवते त्वष्टादश श्लोकैरेव नन्दोत्सव सम्बन्धे वर्णितमित्थम्:—

नन्दोत्सवस्यायमाद्यः श्लोकः:—

नन्दस्त्वात्मजउत्पन्ने
जाताल्हादो महामनाः ।
आहूय विप्रान्दैवज्ञान्
स्नातः शुचिरलंकृतः ॥१॥

वाचयित्वा स्वस्त्ययनं
जातकर्मात्मजस्य वै ।
कारयामास विधिवत्
पितृ देवार्चनं तथा ॥२॥

नन्द के घर पुत्र जन्म के समाचार को सुनकर व्रज के सब बालक भी अनेक प्रकार के वेष धारण करके नाचते-कूदते वहाँ उपस्थित हुए और नन्द ने सभी आगन्तुकों का पूजन किया और कहा कि आप लोगों के आशीर्वादों से ही मुझे आज यह दिन देखने को प्राप्त हुआ है ।

आत्मजे पुत्रे उत्पन्ने सतिनन्दः जाताल्हादः महामनाः स्नातः शुचिरलंकृतः दैवज्ञान् विप्रान् दैवज्ञान् आहूय स्वस्त्ययनं वाचयित्वा आत्मजस्य जातकर्म तथा विधिवत् पितृ देवार्चनं कारयामास ॥

अत्र श्रीश्रीधराचार्याः—

पंचमेजातकं नंदः सूनोः कृत्वा महोत्सवम् ।
गत्वाऽथ मथुरां प्राप वसुदेवागमोत्सवम् ॥

[भा० दी० १०।५।१]

महोत्सवं=जातकर्मादौ महद्दानादिरूपम् । आत्मजे उत्पन्ने —आत्मनोहृदयाज्जायत इत्यात्मजः "हृदयादभिजायते" इति श्रुतेः । आत्मजत्वं चेह पुत्रभावेनात्मनि प्रादुर्भूतत्वमेव नान्यद्ग्राह्यं तत् खलु "आविवेशांशभागेनमन आनकदुन्दुभेः"—

ततोजगन्मंगलमच्युतांशं ।
समाहितं शूर सुतेनदेवी ॥

[भा० १०।२]

—इत्यादिवच्छ्रीनन्द यशोदयोरपिगम्यते ।

यस्य देवेपराभक्तिर्यथादेवेतथागुरौ ।
तस्यैतेकथिताह्यर्थाः प्रकाशंतेमहात्मनः ॥

इति श्रुतेः । महामना—

१—इत्याहमहामना इति 'भक्तिः स्यान्नौ महादेवे' इत्यग्रे वक्ष्यमाणत्वाद्भक्त्या अत्यन्त तादात्म्यापत्त्या महच्छ्रीकृष्णएवमनोयस्यसः ।

२—श्रीकृष्णधारणसामर्थ्येनमहन्मनोयस्यसः[क] ।

३—महान् श्रीकृष्णोमनसि यस्येति चन्द्रशेखरवत्समासः उपलक्षणञ्चैतच्छ्रीयशोदायाअपि ।

४—महान् महत्कार्यकारि मनोयस्य[ख] ।

५—अतिविस्तृतमनाः[ग] ।

६—प्रफुल्लितान्तःकरणोयस्य[घ] ।

७—महदौदार्यप्रवणंमनोयस्य[च] ।

नन्दवसुदेवयोः देवकी यशोदयोश्च आत्मनि तस्य जातत्वे समानेऽपि "फलेनफलकारकमनुमीयत" इति-

---

क. वै० तो० १०।५।१
ख. सुवोधिनी १०।५।१
ग. सा० द० १०।५।१
घ. सि० प्रदीप १०।५।१
च. भा० च० च० १०।५।१

यहीं से नन्दोत्सव का प्रारम्भ हो जाता है, जिसमें पुत्रोत्पत्ति से प्रसन्न "नन्द" ज्योतिषी ब्राह्मणों को बुलाकर, स्वस्ति पुण्याह वाचन के साथ यथा विधि पितरों और देवताओं का पूजन कराते हैं ।

न्यायेनास्ति विशेषः—देवकीवसुदेवयोश्चतुर्भुजत्वेन, नंद-यशोदयोर्द्विभुजत्वेनेति । अथोत्पन्नत्वं नाम च बहिस्ताहृशप्राकट्यमेव ननु जीववत् पुत्रतयोत्पन्नत्वेत्वस्ति-विशेषोऽपि प्रेरणां विनैव पुत्रत्वव्यञ्जिकयाऽऽकृत्या-प्रकृत्याचानयोः प्राकट्यात् तत्तु युक्तम् अनयोरेवप्रीतेः शुद्धपितृभावमयत्वादुत्कृष्टत्वाच्च । नन्दस्त्वित्यादिना तु शब्दव्यक्त वैशिष्टयं न अत्र दर्श्यते परपरत्र च दर्शयिष्यते, तयोरत्वैश्वर्य ज्ञानाच्छन्नमेव—"विदितोऽसि भवान् साक्षात् पुरुषः प्रकृतेः परः" भा० १०।३ इत्यादिना तद्दर्शितम् । ताहृशभावं विनातु श्रीवराहदेवस्य न ब्रह्मपुत्रत्वेन, श्रीकृष्णदेवस्य च नोत्तरापुत्रत्वेन-प्रसिद्धिः तयोस्तस्यनाभिमानोऽपि तस्मात्सर्वांशेन श्रीनन्दस्यात्मजत्वेनोत्पन्नोऽसौ क्रियया तस्या स्पष्टतयैववक्ष्यते 'आहूय विप्रान्' भा० १०।५।१ इत्यादिना। अतएव श्रीमतागर्गेणात्रैवप्रधानता वक्ष्यते च "प्रागयं

"नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादोमहामनाः" श्लोक में आये महामना शब्द के अनेक अर्थ प्रकट किये हैं। यद्यपि इस प्रसंग में नन्द और वसुदेव तथा देवकी और यशोदा आत्मा में बालक की जातता से समान ही हैं, पर फल से फलकारक का अनुमान होता है इस न्याय से चतुर्भुज रूप से वसुदेव देवकी की तथा द्विभुज रूप से नन्द यशोदा की भिन्नता ही है।

वसुदेवस्य क्वचिज्जातस्तवात्मजः" ब्रह्मणाऽपि 'नौमी-डयतेऽभ्रवपुषेतडिदम्बराय' इतिस्तुतौ 'पशुपाङ्गजाय' इत्यनेन समर्थिता पुत्रता।

शुकदेवेनापि—'नायंसुखापोभगवान्देहिनांगोपिकासुतः" इत्यनेन, आगमविद्भिः "सकललोक मंगलोनन्दगोपतनयोदेवता" इत्यनेन समर्थितोह्यात्मजत्वम्। तस्मादत्रनन्दोत्सवारम्भे 'नन्दस्त्वात्मजउत्पन्ने' इत्येवोक्तम् नतु नन्दस्तमात्मजं मत्वेति। अतोऽत्रमायाजन्म च श्रीवसुदेवादौच्याजमात्रायैव तत्राप्यस्यैवान्तरङ्गत्वाज्जातं तस्या मातुरुदरान्तरेस्थितिरस्यतु हृदय इति तदेवंसमानमातृकत्वेनैव विष्णोरनुजात्वेन सा प्रोक्ता तदवं स्थिते यदा स्वाविर्भूतचतुर्भुजरूपाच्छादनाय श्रीदेवकीच्छाजायततदा—यशोदाहृदयस्य द्विभुज-

---

यहाँ "नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने" इस अंश में प्रयुक्त तु शब्द का अभिप्राय स्फुट किया गया है। "अनन्तणविदितोऽसि भवान् साक्षात् पुरुषः प्रकृते परः" आदि के द्वारा उनकी ऐश्वर्य और ज्ञान आदि से आच्छन्न रूप में ही प्रकृति परता का ज्ञान कराया गया है। इस प्रकार के भाव के बिना वाराहदेव की ब्रह्मा के पुत्रत्व रूप में और श्रीकृष्ण देव की उत्तरा के पुत्रत्व रूप में प्रसिद्धि नहीं है, न उनको उनके पुत्रत्व का अभिमान ही है। इसलिये हर प्रकार से उन्हें नन्द के आत्मज रूप में उत्पन्न

रूपस्य तद्रूपाच्छादनपूर्णकाविर्भावस्तत्रासीदिति गम्यते । अतएव "प्रागयंवसुदेवस्य" इति स्वप्रोक्त समाधानार्थं श्रीगर्गेण पुनर्वक्ष्यते–"बहूनि सन्ति रूपाणि नामानि च सुतस्य ते" इति । अथपूर्ववद्गर्ग वाक्येन च श्रीनन्दयशोदयोरभिमत्यासिद्धान्तगत्याच श्रीकृष्णे-निजात्मजत्वं मुख्यत्वेनैव स्थापित 'देव्यां तु तत्तदात्म-नानुभूतं वृत्तं निश्चिन्वत्योः श्रीवसुदेवदेवक्योस्तत् तदभावात् "उपगुह्यात्मजामित्यस्मिन्निव न गौणत्वेनेति विवेचनीयम् । तदेवं सिद्धान्तेस्थितेमहोत्सवानुकूल्येन तदेवप्रथयिष्यामः ।

पुत्रेचोत्पन्नेजाताह्लादइति न केवलं पुत्रोजातः किन्त्वाह्लादोऽपिजातइति सहोक्तिः । पुत्रव्याजेनाह्लाद एवजातः इत्युत्प्रेक्षा । स्वतः सम्भविवस्तुनाव्यज्यते तेनचाह्लादस्यप्राचुर्यंध्वनयतइत्यालंकारिकाः । एतच्च-महोत्सव वैशिष्टयं हेतुः ।

होने से क्रिया के द्वारा आत्मजत्व की स्पष्टता बतलाई गई है। साथ ही आचार्य गर्ग के द्वारा भी उनकी पुत्रत्वेन प्रधानता बत-लाई जायगी और श्रीमद्भागवत के "प्रागयंवसुदेवस्य क्वचि-ज्जातस्तवात्मजः" और "पशुपाङ्गजाय" आदि पुत्रता ही समर्चित होती है।

विप्राः—विशेषतःप्रान्ति पूरयन्ति कामानिति-विप्राः तान्तत्रापि वेदज्ञान्[1] (दैवज्ञान् वा) जातकर्मादि वैदिकविधि सम्यग्विदः श्रोत्रियान् "यावतीर्वैदेवताः सर्वास्ता वेदविदि ब्राह्मणे वसन्ति" इति श्रुतेः ।

शुचिः—वैष्णवतिलकाचमनादिनाविशेषतः पवित्रः सन्जातकर्म "भूयास्त्वपि" इत्यादिमन्त्रैर्मेधाजननादि कर्ममयं वैदिककर्मविशेषं तैर्विप्रैः प्रयोज्यकर्तृभिः कारयामास । तेषामेव तत्र कर्त्तृत्वाभिधानात् तत्र च "कर्मफलं प्रयोक्तरि" इति न्यायात् फलं तस्यैव, वै इति पाठे तच्च प्रसिद्धमेवेत्यर्थः । विधिना=यथाविधी-त्यर्थः । विधिवदिति क्वचित्पाठः—अस्य यथापेक्षं पूर्वैः

१. वेदज्ञान् इति वै० तो०

'प्रागयंवसुदेवस्य क्वचिज्जातस्तवात्मजः" और "वहूनि-सन्तिरूपाणि नामानि च सुतस्यते" आदि के द्वारा बालक की अनेक नामरूपता बतलाई गई है और "नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामना" आदि के द्वारा पुत्रोत्पत्ति की भांति आनन्दोत्पत्ति भी बतलाई गई है और 'आहूय विप्रान् दैवज्ञान्" के द्वारा जातकर्म आदि संस्कारों के सम्पादनार्थ वैदिक विधि के सम्यक् ज्ञाता, आगन्तुकों की समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाले वेदवेत्ता ब्राह्मणों की ओर संकेत किया है ।

परैश्चसर्वैरन्वयः । चार्थे पितृदेवार्चनं च नान्दीमुख-श्राद्धेन कारयामास ।

शङ्काः—

नन्दः स्वयं कथं नाऽकरोत् पितृ देवार्चनम् ?

समाधानम्ः—

कारयामासेत्यनेन स्वयमकरणमुक्तं तत्र च जाताह्लाद इत्यनेनानन्द जाड्यमेव हेतुः ।

अत्र श्रीवल्लभाचार्याः प्राहुः—

चतुर्भिरध्यायैर्विष्णोर्जन्म निरूपणम् तत्र पंचमे नन्दोत्सवारम्भः । "जन्मोत्सवो हरेरत्र पञ्चमे विनिरूप्यते" (सुबो० १०।५।१) लोके चतस्रः लीलासुखदाः स्मृताः ताश्च—बाललीला, मध्यलीला, प्रौढलीला, कामलीला इति ।

'स्नातः शुचिरलंकृतः" अश से यही ज्ञात होता है कि वैदिक विधि से सम्पन्न कराये जाने वाले कार्यों में कर्ता का स्नान आदि के द्वारा अपनी पुनीतता का सम्पादन अधिक आवश्यक है। इन कार्यों का वास्तविक फल उसे तभी प्राप्त होता है जब वह अपने में इन कर्मों के करने की योग्यता का सम्पादन करले । इसी स्थान पर प्रयुक्त च शब्द का अर्थ है, नान्दी मुख श्राद्ध के द्वारा पितर और देवताओं का पूजन किया जाना । "कारयामास" क्रिया से यही ज्ञात होता है कि वह पूजन अर्चन

बाललीला मध्यलीला प्रौढलीला तथैव च।
कामलीलेति लीकेवँ चतस्त्रः सुखदाः स्मृताः ॥
(सुबो० १०।५।१)

भगवत एकं कार्यं बह्वर्थानां साधकम् भवतीति। बाललीला सप्तविधा सैव प्रथमं श्रीवेदव्यासैर्निरूपिता यस्मात् बालभावरतानां रोधःस्यादिति। न केवलं बालभावरतानामपितु उत्सवाविष्टचित्तानां, परमाश्चर्याभिनिवेशिनामलौकिकभावरतानाम्, उपद्रवणोत्सुकानामस्त्रीस्वभावरतानामुद्योगपरायणानाञ्चरोधोऽपिभवेदिति।

शङ्काः—

यशोदया कृष्ण जन्मसमय एव पुत्रोजात इति कथं न ज्ञातम् ?

समाधानम्ः—मायाकारणेन यशोदया न ज्ञातम्। निर्गतायाम् मायायां प्रबुद्धा यशोदा पुत्रं ज्ञातवती। तुकारः कथम् ? पूर्वकथां व्यावर्तयति तुकारः।

शङ्काः—

नन्दः कथमात्मजत्वं चकार भगवति ?

स्वयं न करके अन्य के द्वारा कराया। श्रीबल्लभाचार्य का कथन है कि यहाँ तक ४ अध्यायोंके द्वारा जन्मका निरूपण कर पाँचवें अध्याय में नन्दोत्सव का आरम्भ किया है।

यस्ययथाप्रतीतिस्तथैवशुकेनानूद्यते भगवता तथैव-तेषांबुद्धेःसम्पादनात् । अन्यथा तत् भगवच्चरित्रं नस्यादत आत्मनः सकाशाज्जातः पुत्र एवायमिति नन्दस्य बुद्धिस्तदाह आत्मज उत्पन्न इति । वासुदेवोऽत्रैवाविर्भूत इति सिद्धान्तः ।

जाताह्लादः—निश्चयार्थमत्रज्ञायते । अत्रेदम्विवेचनीयम् यदिनन्दयशोदयोः पूर्वं योगमायाजन्मतदातत्पीतस्तन्यं 'उच्छिष्टञ्च' कथं भगवान् पिबति अतः अन्तःकरणप्रतीत्याऽपिपुत्रोऽयमितिनिश्चयार्थमाह जाताह्लादः । इति प्राकृतोऽपिनन्दः महामनाः जातः । प्राकृतानामल्पमेवमनो भवति ।

विप्रव्युत्पत्तौ श्रीआचार्याः कथयन्ति यत् विप्राणां

लोक की सुखद बाल लीला, मध्य लीला, प्रौढ लीला और काम लीला इन चार लीलाओं में सात प्रकार की बाल-लीला का निरूपण करते हुए अनेक भावनाओं से भावित अन्तः-करण वाले व्यक्तियों के आकर्षण को स्पष्ट किया है। माया के हट जाने पर यशोदा को बालक में पुत्रत्व का ज्ञान होता है, नन्द की बुद्धि भी जब भगवान् के द्वारा वैसी बना दी जाती है तब उन्हें उसमें आत्मजत्व का ज्ञान होता है, जो उनके परमानन्द का कारण है।

विशेषेण प्रान्तीति व्युत्पत्त्या तेषां पूरकत्वमुक्तमन्यथार्थ नाशकत्वेन ते निन्दिताःस्युः ।

देवतानां सान्निध्ये महोत्सवाः शोभनाः भवन्ति । देवताः विप्रशरीरेवसन्ति अतः विप्रानाहूयेति । स्नातः नैमित्तिकं स्नानमत्रवर्णितम् । अत्राशौचनिवृत्तये शुचिः अन्याम्नपिशुद्धिसम्पादितवान् । अलङ्करणम् शुभसूचकं । विशिष्टालंकारे उत्सवः सर्वजनीनोभवति । संस्कार निरूपणं प्रवृत्तिमार्गनिष्ठत्वाय ।

श्रीविश्वनाथचक्रवर्तिमहानुभावस्यायं विचारोऽत्र यत् तुकार शब्देन वसुदेवः आत्मजे उत्पन्ने जाता-

---

शुकदेवजी के द्वारा यहाँ जाताह्लाद शब्द का प्रयोग इसीलिये किया गया है कि उनके घर पुत्र का जन्म हुआ है, कन्या योगमाया का नहीं । अन्यथा योगमाया का जूठा स्तन्य (दूध) भगवान् के द्वारा पीना असंभव ही था । इसीलिये प्राकृत भी नन्द अपने घर पुत्रोत्पत्ति के लक्ष्य से ही महामना बन गये थे ।

"आहूय विप्रान् दैवज्ञान" में विप्र शब्द का यही अभि-प्राय है कि वे प्रथम तो किसी भी कार्य के पूरक होते हैं, दूसरे देवताओं के विप्र शरीर में निवास के कारण वे देवरूप भी होते हैं, अतः उत्सवादि मंगलमय कार्य उन्हीं की उपस्थिति में

ह्लादोऽपि कंसनृपतेर्भयात् संकुचितमना जातकर्मादिकं कर्त्तुं न प्राभूत्, नन्दस्तु आत्मजे उत्पन्ने जाताह्लादो महामना स्वस्तिवाचनपूर्वकं जातकर्म कारयामासेति। तुकारादिदमपि सिद्धयति यत् नन्द गृहेऽपि कृष्णस्योत्पत्तिः।

शुकदेवस्यायमेवाभिप्रायः। हरिवंशोऽपि "गर्भकालेत्वसम्पूर्णे" इति–कथनात् वैशम्पायन मुनेश्चाध्ययमेवाभिप्राय इति। तुकारः पादपूरणे–इति न वाच्यम्। विनापि तुकारेण पाद पूर्तिरत्रतद्यथा "नन्द आत्मज उत्पन्नो" इति। तुकारोऽनर्थकः। आत्मनो जात आत्मजस्तस्मिन्निति जनिधातु प्रयोगादेवाभीप्सितसिद्धेः, इति

किये जाने चाहिये अतः यहाँ उनका आह्वान किया गया है।

"नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने" में तु शब्द का यही अभिप्राय है कि वसुदेव ने पुत्र के उत्पन्न होने पर, आनन्दित होने पर भी कंस के भय से जातकर्म आदि संस्कार नहीं किये किन्तु नन्द नें पुत्र जन्म के अवसर पर जायमान आनन्द से आनन्दित होकर जातकर्मादि सभी संस्कार किये।

कुछ विद्वान् यहाँ तु शब्द के प्रयोग को केवल पाद पूरणार्थक मानते हैं, अतः उनके विचार से यहाँ वह अनर्थक ही है।

नवाच्यम् । "उपगुह्यात्मजामेवम्" इत्यस्मिन् श्लोके अनौरसापत्येऽपि आत्मज शब्द प्रयोगात् । जातकर्मकदा भवति नाडीच्छेदनात् प्राक् । अत्रेदं चिन्तनीयम् । यदि गर्भजत्वं न स्वीक्रियते तदा नाडीच्छेदः कथं सम्भवति । यावत् नाडीच्छेदो नस्यात् जातकर्मतावदेव । "नाडी-च्छेदात्पूर्वमेवजातकर्मोपक्रमश्रवणात्" आत्मजत्वे शंका-व्यर्था श्रीमद्भागवत एव बहवः प्रयोगाः । तद्यथा— "अदृश्यतानुजा विष्णोः" भा० १०।४।६ "प्रागयं वसु-देवस्य क्वचिज्जातस्तवात्मजः" भा० १०।८।१४ "पशु-पाङ्गजाय" भा० १०।१४।१ "देहिनां गोपिकासुतः" गौ० त० "वल्लवीनन्दनं वन्दे" सहोक्त्यलङ्कारकथनम् वैष्णवतोषणीकारानुमतम् ।

अत्र श्रीशुकसुधी महोदयाः कथयन्ति यत् श्रीमद्-भगवत् गीतायां स्वयमेवोक्तं भगवता कृष्णेन यत् मे जन्म कर्म च श्रोतव्यम्—

बालक का जातकर्म संस्कार तभी होता है, जब उसका नाडी छेदन हो जाय नाडी छेदन के पूर्व जातकर्म किये जाने पर यहाँ उसके आत्मजत्व में भी शंका की जा सकती है, जिसके भागवत में भी अनेक प्रयोग हैं। इसलिये वह शंका न हो, इसलिये जातकर्मादि संस्कार कराये गये हैं।

जन्म कर्म च मे दिव्यमित्युक्तं हरिणा स्वयम् ।
तद्वयं मोक्षमिच्छद्भिः श्रोतव्यं परमादरात् ॥

श्रीवसुदेवेन भगवदिच्छयैव सुज्ञाततत्त्वेन भगवत्स्वरूप गुणादिवर्णनमात्रतः पूजयित्वा श्रीनन्दगृहे भगवान् संस्थापितः । श्रीनन्दस्तु पूर्वोक्तरहस्येन स्व वेश्मनि प्रविष्टं पुत्रवत्सलतयाऽऽराधितवान् अतएवाह—"नन्दस्तु" ।

अन्ये पौराणिकास्तु—

नन्दनन्दन एवोपास्यः वसुदेवनन्दनो न । वसुदेवनन्दनस्य यदुभिः सह सम्बन्धत्वात् । यदि परीक्षित् नृपतेर्मनसि चिन्ता स्यात् यत् स्वयमेव श्रीशुकेन पूर्वमुक्तं यत् भगवतः जन्म वसुदेव गृहे वक्ष्यामीति नवमस्कन्धे उक्तम् तत्कथं वसुदेव नन्दनादपि वैशिष्ट्यं नन्दनन्दन-

---

इस प्रसंग पर शुकसुधी महोदय कहते हैं कि "जन्म कर्म च मे दिव्यं' इस गीतोक्त वचन के अनुसार भगवान् के दिव्यादिव्य जन्म-कर्मों का ज्ञाता इस संसार से मुक्त हो जाता है । अतः वसुदेवजी ने उनके स्वरूप को भलीभाँति जानकर ही उनके गुण वर्णनादि द्वारा पूजन से उन्हें नन्द के घर पहुँचाया था और नन्द ने भी पूर्वोक्त रहस्यपूर्वक घर में प्रविष्ट हुए उनका पुत्र वत्सलता के नाते आराधन किया था । इसीलिये यहाँ "नन्दस्तु" का प्रयोग हुआ है ।

स्येति ? "जातोऽग्रतः पितृगृहाद्व्रजमेधितार्थः" भा० ६।२४।६६ न केवलमस्मिन्नेवश्लोके अपि तु यदा धरित्री ब्रह्मणः समीपे स्व दुःखं निवेदयितुं गता तथा ब्रह्मा देवैः सह क्षीरसागरं भगवन्तमस्तौषीत्तदाभगवताऽप्युक्तम् 'वसुदेवगृहे जनिष्यामीति' ब्रह्मणोक्तम्—

वसुदेवगृहे साक्षाद्भगवान्पुरुषःपरः ।
जनिष्यते तत्प्रियार्थं सम्भवन्तु सुरस्त्रियः ॥
(भा० १०।१।२३)

न केवलं दशमेप्रथमेऽध्यायेऽपितु तृतीयेऽपि—'देवक्यां देवरूपिण्यां विष्णुः सर्वगुहाशयः" भा० १०।३।८ इत्युक्तम् । श्रीमद्भगवद्गीतायामपि 'वसुदेवसुतस्यैवप्रसिद्धेः' तत्कथमत्रनन्दनन्दनस्यैवोपास्यत्वमिति

कुछ पौराणिक यहाँ वसुदेवनन्दन का यादवों के साथ सम्बन्ध होने के नाते नन्दनन्दन को ही अपना उपास्य मानते हैं, क्योंकि "वसुदेव गृहे साक्षाद् भगवान् प्रकृते परः जनिष्यते" आदि के द्वारा वसुदेव के घर में भी उनके जन्म होने की बात पहले ही कही जा चुकी है, अतः यहाँ उनकी उपास्यता के रूप में शंका न हो इसलिये—

"नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने" के द्वारा नन्दनन्दन की उपास्यता हो बतलाई है तथा "आत्मज" शब्द से १२ प्रकार के पुत्रों में यह कौन से हैं, आदि शंका के समाधानार्थ आत्मज शब्द

प्रदर्शनायोक्तम् 'नन्दस्त्वात्मजउत्पन्ने' इति वसुदेव-नन्दयोर्मैत्री श्रूयते, मित्रत्वाद्यदि पुत्रत्वं तत्तु समीचीनं किन्तु तदभावेऽत्रविचारोऽपि यदत्रद्वादशविधेषु पुत्रेषु कतमोऽत्रपुत्र इति ।

"औरसो धर्मपत्नीजस्तत्समःपुत्रिकासुतः"

(या० स्मृ० दाय भा०)

इत्यादि धर्मशास्त्रीय ग्रन्थेषु प्रसिद्धत्वात् द्वादशेषु-कतमः । "आत्मा वैजायतेपुत्र इति वेदानुशासनमि-त्युक्तदिशा आत्मन एव रूपान्तर परणतिः पुत्र इति । पुत्र व्युत्पत्तिरत्रसाधिका पुंनाम्नोनरकः तस्मात् पितरं त्रायते–इति पुत्रः" । द्विजस्त्रिभिः ऋणैर्बद्धो भवति, तदैव मुक्तिरस्य यदा पुत्रोत्पत्तिः स्यात् ।

"जायमानो वै ब्राह्मणस्त्रिभिः ऋणवान् जायते ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यः, यज्ञेनदेवेभ्यः प्रजयापितृभ्यः"–सत्यमेवोक्तं मनुना–"ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनोमोक्षे

से यही बतलाया है कि यह "आत्मा वै जायते पुत्र" आदि वेदानुशासन के मार्ग से रूपान्तर में परिणत आत्मरूप ही हैं क्योंकि पुं नामक नरक से उद्धार करने वाला तथा पितरों की उससे रक्षा करने वाला पुत्र ही होता है जिसकी उत्पत्ति से व्यक्ति पितृ ऋण से मुक्ति पाता है ।

ऋणों को साथ लेकर उत्पन्न होने वाले व्यक्ति के तीनों

निवेशयेत्" श्रीनन्दराजस्यद्विधामुक्तिस्तुजाता प्रतिवर्षं विहितयज्ञकर्मणा देवपूजनात् देवऋणतः, स्वधर्मात्-ऋषिभ्यश्च। परन्तु पितृणां ऋणतो मुक्तिः श्रीनन्द-नन्दनस्य जन्मनैवाभवत्।

'तु' शब्देन नन्दराजस्य वसुदेवतोऽपि वैशिष्ट्यम् तुकारोऽनन्तरार्थे[१]।

'तु' शब्देन रामजन्म ज्ञेयः।

रामजन्मकथनं विनाकृष्णजन्मकथनमनु-चितन्तस्मात् 'तु' शब्दः।

तुकारेण वसुदेवाद्भेदेप्राप्ते नन्दगृहेऽपि कृष्णस्यो-त्पत्तिः यदि कृष्णस्य नन्दस्यांगजत्वंविनाकथंमात्मजत्व-मिति चेत्तदा गोपीनां वदनं महदितिन्यायात् ऋषिरूपाः श्रुतिरूपा-मुनिरूपा-वेदरूपाया गोप्यः तासां वचनानि 'नन्दसूनुरयमार्तजनानाम्'।

---

१. मेदिनीकोषः।

ऋणों का स्वरूप और उनसे मुक्ति का प्रकार बतलाते हुए दो ऋणों से मुक्त नन्दराय की नन्दनन्दन के जन्म से तृतीय पितृ ऋण से मुक्ति बतलाई है तथा तु शब्द के अनेक अर्थ बतलाये हैं।

भगवान् कृष्ण नन्द के ही आत्मज हैं। यह बात ऋषि-

तवसुतं सतियदाधर नन्दसूनुरनघे नववत्सः' [रुद्र-यामले च] 'कृष्णोऽन्योयदुसम्भूतः' 'यः पूर्णः सोऽस्त्यतः परः वृन्दावनं परित्यज्य सक्वचिन्नैवगच्छति ।'

आत्मजपरिपुष्टिः कालियह्लदाद्बहिरागमन वेलायाम् विप्रैरुक्तोनन्दः "दिष्टद्यामुक्तस्तवात्मजः" इति अतः नन्दात्मजोऽयमेव ब्रह्मादिमानहा इन्द्रमानमर्द्दकः कालियमर्द्दकश्च ।

अथ जातकर्मभव्यं कर्तव्यमिति गुरुभिरादिष्टेन तेन तत्प्रत्युत्क्रमश्चक्रे यथा—

आनर्चिरे व्रजेशित्रा मातृकायास्तदातुताः ।
मातुः कमिव कं यासामित्यर्थं व्यक्तिमागताः ।।
अथ नान्दीमुख श्राद्धं राद्धं गोपाल पालिना ।
पितरो हि स्वयं यस्मिस्ते नान्दीमुखतांगता[१] ।।

१. गो० च० च० पू० १८

रूप, श्रुतिरूप, मुनिरूप तथा वेदरूप गोपियों के 'नन्दसूनुरयमार्त जनानां' वचन से भी समर्थित है ।

फिर भी "तव सुतं सति यदाधर बिम्बे" तथा "नन्दसूनुरनधे नववत्सः" आदि वचनों से भगवान् श्रीकृष्ण की नन्दात्मजता ही बतलाई गई है तथा कालिय के ह्रद से उनके बाहर

अथ वेदविधानपटुभिः पुरोहितबटुभिः सार्धमन्तः पुरं प्रविष्टेभद्रकुम्भादिभद्रविशिष्टसूतिकागृहानुपविष्टे श्रीव्रजकुलमहिष्ठे सेष्टविशिष्टे नन्दे परमसनोरथारोहिणी रोहिणी तदवधाय कुलत्रय यशोदायियशोदाखट्वामनाः पटेनव्यवधाय बालं पिधाय गृहावग्रहणीमानिनाय किन्तु नवबालकं विलोकयितुं शर्मणा नर्मणा च निजालंकृत्यर्थं प्रजावत्यस्तं प्रत्यभितः किमपि किमकिमप्यमूल्यता पर्याचितं याचितवत्यः प्रतिश्रुतेतु तं विलोकयामासुः ।

यद्यपिबहुविधभावा जाता गोष्ठेशितुस्तर्हि ।
तदपि च जाड्यं बलवज्जज्ञे गाम्भीर्य शीलस्य ।।२१

[गो० पू० च० पू०]

अथचिराय धीरभावं धारितवती व्रज धरित्री राज्यश्रीमती तदा नन्दस्पृहिणीनवनन्दनमुपनन्दगृहिणीतदुत्सङ्गसङ्गिनं चकार ।

निकलने पर "दिष्टया मुक्तस्तवात्मजः" के द्वारा ब्राह्मणों द्वारा भी उनकी नन्दात्मजता का ही समर्थन किया गया है। अनन्तर जातकर्म के अन्तर्गत नान्दीमुख श्राद्ध आदि की विधि सम्पन्न कराई है। इसी प्रसंग में निर्मल धर्मानन्द का आशौचाभाव समर्थित होने पर दानीय विप्रों के लिये तत्कृत दान आदि का वर्णन है।

उत्संगं वहति शिशुं व्रजाधिराजे ।
सा दूरादधिशयिता प्रसूतिशय्यास् ।।
आसोत्तच्छ्रवणजबाष्परोमहर्ष-
स्तम्भाद्यै र्विवश-तनूर्व्रजाधिराज्ञी ।।

अथ तत्रमेधाजनकं कर्म शर्मान्तनामभिर्निर्ममेयत्र 'भूस्त्वयि' इत्यादिकं पठित्वा हेमान्तर्हितयानामिकया बालो घृतलवं लेहयामासे । अथायुष्य क्रियाक्रियतेस्म यत्र 'ओं अग्निरायुष्मान्' इत्यादयः कुमारस्यदक्षिणे कर्णे जेपिरे । ततः 'ओं दिवस्पति' इत्यादिकेन डिम्भःस्पृष्टः । दिक् चतुष्टये मध्ये च 'ओं इदमन्नं प्राणाय' इत्यादिभिर्भूमिश्चाभिमन्त्रिता । ओं 'अश्माभव' इत्यादिना पुनरर्मकोऽभिमृष्टः ।

ततः ओं इडासि इत्यादिना तन्माताभिमन्त्रिता पुनर्मातुः स्तनद्वयम् । ओं 'इमंस्तनम्' इति ओं 'यस्तेस्तनम्' इत्याभ्यामृग्भ्यां क्रमेण प्रक्षालितम् । ततश्चतमुत्तानशायिनं सूतिकाशय्यायां निधाय तच्छिरः प्रदेशे 'ओं आपोदेवेषु' इत्यादिनोदपात्रं निहितमिति । तदेवं जातकर्म शर्मणिनिर्वृत्ते बालनाभिनाले च प्राप्तच्छेदनकाले वृत्ते परमानन्दसन्दोहेनानवहितप्रायायासैव तदैव तदवधात्री धात्री सपुलककायाचित्रमिदमिति द्वित्रिवार-

मिदं निवेदितवती—राजन् । इतरत्रनाभिसरसि नाल-मेव लक्ष्यते, नतु नालीकम् अत्रपुनर्नालीकमेव नतु 'नालम्' इति—किंच,

अङ्घ्रयोर्व्यक्तदरारिवज्रकमलाद्याश्चर्यचिन्हैरलम्
कम्रैरुज्ज्वलितांतथाकरयुगे तैः कैश्चिदन्यैरपि ।
पश्य श्रीव्रजनाथ नीरदरुचेर्बालस्य सामुद्रिको-
ल्लङ्घिश्रीविभवस्य देह बलनामस्मासु चित्रप्रदाम् ।

अशौचाभावः—तदा च सर्वस्मिन्नपि विस्मित चर्या-पर्याकुलेवटवः सहासपाटवमूचुः—अये ! सर्व शर्मद ! निर्मल धर्मणो भवतः कथमाशौचं नाम सामर्थ्यं समर्थ-यताम् ? यतोनाडीच्छेद एव वृत्ते तदामनन्तिस्म । तदेव फुल्ल सन्निखिलरोम-समुत्फुल्लमुखसोमः परिवारित चटुस्तोमतया बहिर्विहित होमस्थानमागम्य सम्यगर्पित सर्वानन्दः सद्भिःसमर्पित-तत्तद्वृत्तशन्तम-कन्दः श्री-मान्नन्दस्तात् दानीयविप्रानानीय प्रदानारम्भं सम्भृतवान् ।

धेनूनां नियुते प्रादाद्विप्रेभ्यः समलंकृते ।
तिलाद्रीन् सप्तरत्नौघशातकौम्भाम्बरावृतान् ॥

[नन्दो० ३]

(नन्दः) समलंकृते धेनूनां नियुते प्रादात् सप्तरत्नौघ शातकौम्भाम्बरावृतान्तिलाद्रीन् (प्रादात्)

नियुते=द्वे लक्षे-[भावा० दी०] [सुबोधिनीकाराः]

लक्षम्-सि०प्र० लक्षमपि

तिलाद्रिः=दशभिर्द्रोणैरुत्तमस्तिलपर्वतो भवति—

पञ्चदोणैर्मध्यमो भवति—

त्रिभः कनिष्ठो भवति ।१ [भविष्योत्तरे]

जीवगोस्वामिना श्रीधरोक्त मतखण्डनं प्रमाण-निर्धारणपूर्वकमत्रकृतम् । तदनुसारेण 'विंशतिर्लक्ष' संख्या नियुते निहिताविद्यते ।

एकंदशशतसहस्त्राण्ययुतम्—

प्रयुताख्यलक्षम्—

अथनियुतम् [क्षीरस्वामिः]

वीरराघवाचार्यस्तुश्रीधरोक्तंसम्मनुते ।

---

१. उत्तमो दशभि द्रोणैर्मध्यमः पञ्चभिर्मतः ।

त्रिभिः कनिष्ठो राजेन्द्र तिल शैलः प्रकीर्त्तितः ॥

(वंशी० मा० दी० प्र०)

द्रोणः—खारी द्रोणाढक प्रस्थाः कुडवं चपलंपिचु ।

शाणकोमाषकश्चेतियथापूर्वं चतुर्गुणाः ॥

षट्पञ्चाशदधिकपलशतद्वयेनैवद्रोणःस्यात् । (वै० तो०)

मन्दरादयश्चत्वारः पर्वताः स्थापनीया भवन्ति तिलदाने ।

इत्थं निवेश्यामरशैलमग्र्यम्-
अतस्तुविष्कम्भगिरीन् क्रमेण ।
तुरीयभागेन चतुर्दिशं च
संस्थापयेत्पुष्पविलेपनाढ्यान् ॥

ते च मन्दरादयश्चत्वारः तथा—

मेरुर्महान् व्रीहिमयस्तु मध्ये
सुवर्ण वृक्षत्रय संयुतः स्यात् ।
पूर्वेणमुक्ताफलवज्रयुक्तः
सौम्ये च वैडूर्य सरोज रागैः ॥

व्रीहिमये सुमेरुपर्वते सुवर्णवृक्षत्रयसंयुते ब्रह्मा-विष्णु-शिवाः दिवाकरश्च सुवर्णमयास्थाप्याः ।

पर्वतोऽयं वस्त्रावृतः स्यात् ।

शुक्लाम्बराव्यम्बुधरावलीस्यात्
पूर्वेण कृष्णनि च दक्षिणेन ।

महामना नन्द के द्वारा—'धेनुनां नियुते प्रादाद्विप्रेभ्यः समलंकृते । तिलाद्रीन सप्त रत्नौघ शात कौम्भाम्बरावतान् ॥" आदि श्रीमद्भागवत के वचनों द्वारा धेनुओं की संख्या तथा तिल आदि पदार्थों के परिमाण पर अनेक पुराणों और विद्वानों

वासांसि पश्चादथ कर्बुराणि
रक्तानि चैवोत्तरतो धनानि ।।

अत्र शातकौम्भाम्बरावृतत्वं सुमेरोर्वर्णस्यापि सादृश्याय । ततः पूर्वेभ्योऽन्यान्यैतानिताद्दृशानि सप्तबहुलरत्नादियुतान् प्रकर्षेणपादप्रक्षालनादिपूर्वकं निजजनैस्तत्तत्गृहेषु तत्तत्प्रस्थापनादि क्रमेणप्रादात् । सुवर्णसूचिकया स्यूतानिवसनानि-इतिविजय० नन्दं प्रति महामना इति कथितन्तस्यविशेषणस्यकृत्यमिदमिति श्रीमद्वल्लभाचार्याः । प्रत्येकमलंकृतम् भगवत्सान्निध्यात् । अत्रपश्चानांदानम् दानेषु मुख्यत्वात् गावः हिरण्यम्-वासांसितिलानिरत्नानिच ।

स्वसंग्रहात्—अस्मत् पितृचरणास्त्वत्रेत्थं वाचयन्तिस्म । दानग्राहीबहुगुणभासकोभवतितदुक्तम्—

नर्त्तकानां च वेश्यानां भटानामर्थिनामपि ।
कायथानां च भिक्षूणामसत्यवचनं सदा ।।

के विचार का दिग्दर्शन कराया गया है। यह प्रसग उपरिलिखित ३ पेजों में चलता है, जिसमें श्रीमद्भागवत के अनेक टीकाकारों के विचार भी उद्धृत हैं।

इसी प्रसंग पर लेखक के पितृचरण श्री श्रीवरजी शास्त्री दान लेने वाले नर्तक, वेश्या, भट, याचक आदि के द्वारा बहुधा

घटकानां भाटकानां लुब्धानां च कामिनां ।
दरिद्राणां च मूर्खाणां स्तुतिपूर्वं वचः सदा ॥[१]

नाऽत्र वक्तरि असत्यवचनत्वारोपः कथमपि-सिद्धयति अत्र तु वीतरागः शुको वक्ता ।

अत्रेदं विचारणीयम् यत् सत्यपि वसुदेवगृहे भगवतः कृष्णस्य जन्म तथापि भावप्रधानत्वादपत्यत्वन्नातिशायो । भावकारणेनैव ब्रह्मणः नासिकातः जायमानो-वराहः नहि ब्रह्मपुत्रत्वप्रसिद्धिमुपगतः । ब्रह्मा स्तुति-मकरोत्ः—"जितंजितंतेऽजितयज्ञभावन"

वराहं नहि लोके नासिकातः जन्मग्रहणान्नासिका-नन्दन इति कथयन्ति जनाः ।

स्तम्भेनृसिंहः प्रादुर्बभूव नहिस्तम्भनृसिंहयोः पितापुत्रत्वभावः नहिस्तम्भनन्दनोऽयमितिकश्चित् कथ-यति । वसुदेवोऽपि श्रीकृष्णजन्मनि-ईश्वरभावमेव-प्राधान्येन प्रसारयत्—

१. प्रातः स्मरणीयाः श्रीश्रीवर 'चतुर्वेदी' शास्त्रिणः ।

असत्य (मिथ्या) प्रशंसा का किया जाना बतलाते हैं, किन्तु इस प्रसंग के वक्ता वीतराग भगवान् शुक हैं, अतः उनका 'धेनुनां नियुते प्रादात्" आदि कथन असत्य कदापि नहीं हो सकता ।

लोक में हृद्गत भाव की ही प्रधानता स्वीकार की गई

तमद्भुतं बालकमम्बुजेक्षणं ।
चतुर्भुजं शंखगदाद्युदायुधम् ॥
(भा० १०।३।९)

एवं भूतं रूपं दृष्ट्वा मनसा तं बालकमीश्वरमेवमेने–
विदितोऽसिभवान् साक्षात्पुरुषः प्रकृतेः परः ।
केवलानुभवानन्दः स्वरूपः सर्वबुद्धिदृक् ॥
(भा० १०।३।१०)

तेन वसुदेवे पुत्रभावो नास्ति, कृष्णे च पिता भावो नास्ति । शुकेनपृष्टः परीक्षिन्नृपतिः प्राह यन्मे सम्बन्धोऽस्तिकृष्णेन—

१–मे पितामहः अर्जुनः कृष्णस्यसखासीत् ।

हैं, इसलिये ब्रह्मा की नासिका से प्रादुर्भूत वाराह तथा खम्भ से आविर्भूत नृसिंह में ब्रह्मा और वाराह तथा खंभ और नृसिंह में पिता पुत्रत्व की प्रतीति संभव नहीं उसी प्रकार "तमद्भुतं" आदि के द्वारा जायमान भगवान् कृष्ण के चतुर्भुज रूप में ईश्वरत्व का दर्शन करने वाले वसुदेवजी का उनमें पुत्रत्व भाव नहीं था और न कृष्ण का ही उनमें पितात्व का भाव था, इसी प्रसंग में श्रीशुकदेवजी के द्वारा पूछे गये राजा परीक्षित् ने भगवान् कृष्ण से अपना सम्बन्ध बतलाया है, जिसमें अपने पितामह अर्जुन को उनका सखा कहा है और माता के गर्भ को अश्वत्थामा के अस्त्र द्वारा नष्ट किये जाने की अवस्था में अपने

२—मे स्वामी श्रीकृष्णः । यदाऽहं मातृगर्भे आसम् तदा अश्वत्थाम्ना निसृष्टेन बाणेनोदरपीडाऽसह्यत्वात् माता कृष्णशरणं गता । कृष्णेन रक्षिता च ।

शुकः प्राह तदा तव भ्रातृभावोऽपिगर्भेस्थितत्वात् परं ते मातुः कृष्णे पुत्रभावो नास्ति । अतः यस्य भावस्तत्रैव तस्य सम्बन्धः ।

परीक्षित् प्राह भगवन् मयैवं स्वीक्रियते । भगवति नहि शरीर मात्रसम्बन्धमेवकारणं भवितुमर्हति । हे राजन् ! भगवान् कृष्णः वसुदेवगृहे जन्म गृहीत्वाऽपि नन्दनन्दन इति स्पष्टम् । तस्य नन्दनन्दस्य जन्मसमये नन्दादयः गोपाः यशोदाप्रभृतयः गोप्यः च सुषुपुः ।

पितामह के सम्बन्ध द्वारा उसके रक्षा किये जाने की बात कही है । अतः लोक में भाव ही प्रधान है । इसलिये वसुदेवजी को "तमद्भुतं बालकमम्बुजेक्षणम्" तथा "विदितोऽसि भवान् साक्षात् पुरुषः प्रकृतेः परः" आदि के द्वारा उनमें ईश्वरत्व का ज्ञान ही होता है, पितृत्व का नहीं । किन्तु नन्द-यशोदा की उस बालक में ईश्वरत्व भावना नहीं किन्तु पुत्रत्व की भावना ही है ।

वसुदेव के घर में जन्म लेने वाले उस बालक कृष्ण को श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षित् के लिये नन्दनन्दन ही बतलाते हैं ।

जातस्य बालस्य कालोऽपि कैश्चिन्नज्ञातः निद्रावशीयत्वात् । प्रातःकाले नन्दस्यभगिनी सुनन्दा उत्थाय यशोदाशयने बालकं ददर्श सुनन्दया बोधिता यशोदा नेत्रनिमोलनं विधाय उत्थिता । सुनन्दा प्राह–हे यशोदे ! ते शय्यायां कुमारोऽस्ति सावधानीभूयोत्थातव्यम् । ततः विस्फारितनेत्रा यशोदा शय्यायां बालकं ददर्श । तर्कयामास सा बहुविधं सा–अहो एतत् किमस्ति—

१. मेघोऽस्ति
२. रूपब्रह्माण्डमस्ति
३. मणिमय दीपोऽस्ति
४. श्यामतमालोऽस्ति
५. नीलकमलमस्ति
६. रूपमयं भवनमस्ति

नन्दनन्दन के जन्म के समय नन्द आदि गोप तथा यशोदादि गोपियाँ योगमाया द्वारा इतनी अधिक निद्रा के वशीभूत हैं कि उन्हें जायमान बालक का समय भी नहीं जान पातीं । प्रातःकाल नन्द की बहिन सुनन्दा उठकर तथा यशोदा की शय्या पर बालक को देखकर यशोदा को उठाती है तथा यशोदा भी अपनी आँखें बन्द किये ही उठ जाती है, सुनन्दा उससे कहती है कि तेरी चारपाही पर बालक है, तू सावधानी से उठ ।

७. योगिनां मनोऽस्ति
८. भक्तदुःखकन्दनमस्ति
९. विराडक्षियुगलस्याञ्जनमस्ति
१०. वामे मनोरञ्जनमस्ति
११. व्रजदुःखभंजनमस्ति
१२. गोपिमनोमोहनोऽस्ति
१३. प्रेममालास्ति वा मे 'लाला'ऽस्ति ।

सुनन्दा घटोपरिस्थालीं स्थापितवती । अद्यापि बालजन्मसमये व्रजेस्थालीवादनं भवति । कोलाहलः समभवत् तदा सुनन्दा धावन्ती नन्द मुपजगाम । मार्गे चारा ऊचुः । केयम् कुत्र गच्छति । सुनन्दा प्राह—अहमस्मि नन्दभगिनी सुनन्दा ।

चारा ऊचुः—रजनीमध्ये कथं धावसित्वम् ।

यशोदा आँखें खोलकर अपनी शय्या पर बालक को देखती हैं और अनेक तर्क करती हैं कि वह क्या है और उसे अनेक रूपों में देखती हैं ।

बालक जन्म का ज्ञान होने पर थाली बजाई जाती है जो व्रज की एक परम्परा है, अनन्तर बालक के जन्म का कोलाहल होने पर दौड़ती हुई सुनन्दा आधी रात के समय ही पुत्र जन्म का समाचार नन्द को देती है और नन्द भी बहिन

सुनन्दाप्राह—किमपि मङ्गलं जातम् । बालको जातः
द्वारा ऊचुः—त्वं स्वस्थाने गच्छ । समाचारमिमं वयं
निवेदयिष्यामोनन्दसविधे गत्वा ।

सुनन्दाप्राह—नहि नहि मे वचनं श्रुत्वा स बहु-
धनं दास्यति एवं कथयित्वा नन्दभवने जगाम । आवृत
कपाटं विलोक्य साऽऽह–हे भ्रातः ! दिष्ट्या-दिष्ट्या ।

नन्दः प्रोवाच—किं जातम्, पुत्रो वा पुत्री ।

सोवाच—नहि नहि भ्रातः ! पुत्री नैव, पुत्रः ।
नन्दस्तु ब्रह्मानन्द सुखं प्राप । शीघ्रमेवोष्णीषं शिरसि
कंचुकंवदने, स्कन्धयोर्दुकूलं धारयित्वाऽऽभूषणानि च
मूर्ध्नि धारयित्वा स्वलकुटीं गृहीत्वाऽऽदर्शे वदनं
विलोक्य भद्रंभद्रमिति ब्रुवन् सूतिकागृहं प्रस्थितः !
सुनन्दाप्राह भो भ्रातः ! कुत्रगच्छसि मामनादृत्य ।
दीयतां मनसि विचारितम् किञ्चिद्रत्नमिति । नवलक्ष-

सुनन्दा के द्वारा पुत्र जन्म की बात जानकर ब्रह्मानन्द में मग्न
हो जाता है, अनन्तर वस्त्र-भूषण जैसे-तैसे धारण कर हाथ में
अपनी लकुट लेकर चलने की तैयारी करता हुआ शीशे में
अपना मुख देखता है और सोवर के घर में जाने को तैयार हो
जाता है, जब सुनन्दा आनन्द के समाचार देने वाली के रूप में
मुझे कुछ दे इस तरह माँगती है तो, अपने गले से नौलखा हार

रूप्यकमूल्यांमहार्घां रत्नमयीं मालां ग्रीवातोनिःसार्य प्रादात् भगिन्यै सुनन्दायै। भगिन्यपि दिष्ट्या दिष्ट्या, भद्रम्भद्रमिति कथयित्वा तूर्णं यशोदां प्रति प्रस्थिता। नवीननीरदप्रभंबालंभूमिस्थं दृष्ट्वाऽऽतीवाह्लाद युक्ता सन् कुलदेवतां सस्मार। धात्र्या तदैवशीततोयेन स्नापितः स बालः।

यशोदाप्राह—व्रजराज ! अस्माकं गृहे प्रथममेवायं बालोजातः न वयं जानीमः शिष्टाचारानपि। रोहिणो जानाति अतः तामाहूय ज्ञातव्यं सर्वं ज्ञानयोग्यमिति।

नन्दराजस्तूर्णं द्वारपालानाह। भो भो द्वारपालाः श्रीमतींरोहिणीमानीयताम् ससम्मानपुरःसरम्। तथाऽन्ये ये व्रजवासिनः सन्तितान् श्रावयन्तु बालजन्मोत्सववृत्तान्तम् वृद्धैः प्रेरितो नन्दः स चैलस्नानं कर्त्तुं यमुनां गतः। तदुक्तम्—

उतार कर दे देता है, अनन्तर सुनन्दा यशोदा के पास पहुँचकर नव जलद श्याम बालक का साक्षात्कार करती है, बालक ठंडे जल से स्नान कराया जाता है। बालक जन्म के सभी शिष्टाचारों को कराने के लिये रोहिणी को बुलाया जाता है। नन्द स्वयं भी कुल वृद्धों की प्रेरणा से यमुना में स्नान करने के लिये जाते हैं, क्योंकि "श्रुत्वा जातं पिता पुत्रं स चैलस्नानमाचरेत्'

श्रुत्वाजातं पिता पुत्रं स चैलं स्नानमाचरेत् ।
उत्तराभिमुखोभूत्वा नद्यां वा देवखातके ॥

समयेऽस्मिन् सवस्त्रस्नानं क्रियते । स्नानसमये उत्तरादिक्चोत्तमा भवति । स्नानं नद्यां वा देवखातकेऽभावे गृहेऽपि क्रियते ।

स्नानादिकं विधाय दानं चक्रे । ब्राह्मणैः कथितं यदद्य तव पाणी रत्नानि न धारयति । विह्वलस्त्वम् तदानन्दः प्राह—कपाटानि उद्घाट्य गृह्यताम् सर्वं मनोऽभीष्टं धनधान्यादिकम् । तदा तु गोकुले महान् कोलाहलो जातः । यस्यावश्यकता स्यात् स गच्छेत् नन्दमन्दिरे । परं यत्र लक्ष्म्याः पतिः स्वयमेवराजते तत्र लक्ष्म्याः का कथा सा तु हस्ते गतापि कृष्णजन्मोत्सवविह्वलैर्जनैःसर्वत्रविकीर्यते । चाराः वेदज्ञान् ब्राह्मणानामन्त्रयितुंगतास्तत्र केचित् स्नानं चक्रुः,

---

आदि धर्मशास्त्र के वचनानुसार पुत्र जन्म होने पर पिता को स चेल स्नान करने का विधान है। स्नानादि क्रिया कर लेने के बाद द्वार पर आने वाले प्रत्येक याचक को नन्द इतना अभीष्ट दान देते हैं कि वह बात चारों ओर फैल जाती है और कोलाहल हो जाता है कि जिसको जिस वस्तु की आवश्यकता हो वह नन्द के मन्दिर पर जाकर मनचाही वस्तु प्राप्त करे। क्योंकि वहाँ लक्ष्मी के पति स्वयं आकर विराज रहे हैं।

केचित् सन्ध्यावन्दनं चक्रुः । केचिद्भगवत अर्चां चक्रुः, केचित् प्रदक्षिणां चक्रुः, पाठं केचित् कथां केचित् चक्रुस्तर्पणश्चकेचिच्चक्रुरिति ।

चारा ऊचुः—हे भूमिदेवाः ! ब्रजराजगृहे पुत्रोजातः एतत् श्रुत्वा ब्राह्मणा कर्माणि तत्रैवपरिसमाप्य दिष्ट्यायति, दिष्टयायति वचनं बारंबारं मुखैरुच्चार्य शब्दं चक्रुः । नन्दोऽपि वेदज्ञात्-दैवज्ञात् च ब्राह्मणानागतान् विलोक्यानन्दपूर्णेक्षणः आसनानि ददौ । तत्र तान् संस्थाप्याह भो अपत्यमङ्गलानि श्रावयन्तु । इति समुच्चार्य नन्दः वस्त्राणि-रत्नानि-आभूषणानि च समर्पयामास । तेऽपि जातकर्मकर्तुमाज्ञापयामासुः ।

उक्तमपि:—

तस्मिञ्जन्ममुहूर्तेतु सूतकाऽन्ते तथाशिशोः ।
जातकर्म च कर्त्तव्यम् पितृपूजनपूर्वकम् ।।

नन्द के द्वार पर कृष्ण जन्म से विह्वल लोगों द्वारा पर्याप्त धनधान्य लुटाया जा रहा है । उसी समय भेजे गये चार वेदज्ञ ब्राह्मणों को बुलाने के लिये जाते हैं और सन्ध्या पूजनादि कार्य करते हुए उन वेदज्ञ ब्राह्मणों को लाते हैं, जिन्हें आया हुआ देखकर नन्द उन्हें अधिक प्रसन्नता के साथ उपयुक्त आसन देते हैं, वेदज्ञ तथा दैवज्ञ वे ब्राह्मण जब अपने-अपने आसनों पर

जातकस्य जन्मकाले, सूतकान्ते जातकर्म कुर्यात् । सारसंग्रहे तु विप्राणां-एकादशेऽन्हि, क्षत्रियाणां त्रयोदशेऽन्हि वैश्यानां षोडशे, शूद्राणां मासान्ते जातकर्मविधिः प्रोक्तः । जातकर्म आयुर्वर्द्धनार्थं कर्त्तव्यमिति गर्गमुनिः ।

जातकर्मक्रिया कुर्यात् पुत्रायुः श्रीविवृद्धये ।
ग्रहदोषविनाशाय सूतकाशुभविच्छिदे ॥

ब्राह्मणैः प्रोक्तः नन्दः जलस्थाने द्रव्यं, द्रव्यस्थाने जलं समर्पयामास । गन्धस्थाने सुवर्णमुद्रां, मालास्थाने रत्नमालाञ्च । तदा ब्राह्मणा ऊचुः हे नन्दराय ! कथं पूजनं क्रियते । पूजनेऽपि मानसी स्थितिः क्वाप्यन्यत्रैव । नन्दः प्रोवाच—ब्राह्मणाः ! गृह्यन्तां धनानि क्रियन्तां

आसीन हो जाते हैं, तो नन्दराय उन्हें पुत्र जन्म के मंगल सुनाने के लिये कहते हैं और वस्त्र आभूषण और रत्नादि से उनका सत्कार करते हैं, ब्राह्मण नन्दराय के बालक का जातकर्म करने की आज्ञा देते हैं और शास्त्रों के अनुसार जातकर्म की विधि बतलाते हैं ।

नन्दराय ब्राह्मणों की आज्ञा से गो-पूजन का कार्य प्रारम्भ करते हैं । चित्त की असावधानी से उसमें अधिक अस्त-व्यस्तता देखी जाती है । ब्राह्मणों के द्वारा जब उनसे मन स्वस्थ तथा

पूजनादिकं सर्वं भवन्त एव । नाहं पूजने समर्थः । तदा ब्राह्मणाः मार्कण्डेयादिमहर्षिपूजनं ग्रहपूजनञ्चक्रुः । श्राद्धोऽप्यत्रावश्यक इति—

व्यतीपाते च संक्रान्तौ ग्रहणे वैधृतावपि ।
श्राद्धं विना शुभं कर्म प्राप्ते कालेऽपि नाचरेत् ॥

दाने च नन्दः—सुवर्णमण्डिताः गावः रौप्यखुराः दशलक्षसंख्याकाः ददौ । सप्ततिलपर्वतांश्च ददौ ।

दानादिकं नालच्छेदनात्प्रागेवकृतमिति मन्तव्यम् । आह भगवान् जैमिनिः—

यावन्नछिद्यते नालं तावन्नाप्नोतिसूतकम् ।
छिन्ने नाले ततः पश्चात्सूतकं तु विधीयते ॥

दानविधिर्विष्णुपुराणेऽपि वर्णिता नन्दस्य—तद्यथा—

हिरण्यं गां महीं ग्रामान् हस्त्यश्वान्नृपतिर्वरान् ।
प्रादात् स्वन्नं च विप्रेभ्यः प्रजातीर्थे स तीर्थवित् ॥

स्थिर करने के लिये कहा जाता है तो वे ब्राह्मणों से कहते हैं, ब्राह्मणदेवो ! आप मनचाहा धन लीजिये और पूजनादि सब काम आपही पूरा करिये, मैं पूजन करने में असमर्थ हूँ । ब्राह्मण नन्दराय के इस निर्देश से, मार्कण्डेय आदि महर्षियों का पूजन, नौ ग्रहों का पूजन स्वयं ही करते हैं तथा नान्दीमुख श्राद्ध का सम्पादन भी करते हैं, नन्दराय प्रसन्न होकर ब्राह्मणों को सुवर्ण

प्रजातीर्थे पुत्रोत्पत्ति कालेइत्यर्थः । नन्दराजः प्रत्यक्षे द्विलक्षधेनुं प्रादात् । या गावः प्रदत्ताः सवत्सा बहुदुग्धशीलादि गुणसम्पन्ना न्यायार्जिता वस्त्राभूषणादिसमलंकृताः क्षौमसूत्राद्याच्छादिताः पीत-पाटल-चित्रविचित्रवर्णवस्त्राच्छादितपृष्ठाः, घंटायुताः, स्रक्चन्दनयुता, रक्षाबंधयुता, स्वर्णशृंगयुता-आसन् । धेनवोऽपि कांस्यदोहयुताः, स्वर्णरजतरत्नवस्त्रादिबहुदक्षिणायुताः, शीलादि गुणवद्भ्यः, कुटुम्बयुतेभ्यः विद्यायुक्तेभ्यः, धेनु पालनेच्छापरेभ्यः प्रादात् सः[१] ।

१. तेभ्यश्चदक्षिणीयेभ्यः प्रत्ता या दक्षिणामुना ।
तथाप्य क्षीणयान्येषामक्षीण्याश्चर्यमाययुः ॥
वाडव्यानामसंख्यानां नासीत् परिचितिस्तदा ।
ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन् परिचायकतां ययौ ॥
(गो० च० च० ३४)

शृङ्ग आदि से विभूषित १० लाख गोदान करते हैं, तिलों के सात पर्वतों का दान किया जाता है, क्योंकि यह सब नाल छेदन से पूर्व जब तक सूतक न लगे उससे पहले ही कर लिया जाता है, "यावन्न छिद्यते नाले तावन्नाप्नोति सूतकम्" के अनुसार सूतक का यही विधान है। अतः इस अवसर पर नन्दराय पर्याप्त दान करते हैं।

तत्र येविदितवेदाभिप्राया-विप्रा-निजनिजविद्याति-शायकाः सूतमागधवन्दिकृशाश्विगायकाः स्वच्छन्दनाना शब्दवादका-वादकाश्च, ते सर्वेऽपि तस्मिन् पर्वणि सङ्गिनः सन्तः सुमङ्गलमेव शब्दायमानाः पृथक्ताया-मप्यपृथङ्निस्स्वना इव विश्वं विस्मापयन्तिस्म। याव-देवं वृत्तं वृतम् तावद् व्रजस्थलमपि हृष्टमिव दृष्टं किमुत व्रजस्थाः। यतः संसृष्टतयाविक्षेपशून्यमिव संसिक्ततया स्निग्धमिव चलच्चित्रध्वजादितया नृत्यदिव चासीत्।

कालेन स्नानशौचाभ्यां
संस्कारैस्तपसेज्यया।
शुद्ध्यन्ति दानैः सन्तुष्ट्या
द्रव्याण्यात्माऽऽत्मविद्यया ॥४॥

अन्वयः—कालेन-स्नानशौचाभ्यां संस्कारैस्तप-

इस अवसर पर नन्दराय के द्वारा जो ब्राह्मणों की गायें दान रूप में दी गई हैं उसमें पाने वाले ब्राह्मण भी अनेक विशिष्टताओं से विशिष्ट हैं तथा दी जाने वाली गायें भी सब प्रकार की सामग्रियों से विभूषित हैं नन्दराय के पुत्र जन्म के इस मङ्गलमय अवसर पर व्रज का सौन्दर्य भी अनेक प्रकार से बढ़ाया गया है।

सेज्यया दानैः सन्तुष्ट्या द्रव्याणि शुद्ध्यन्ति, आत्मविद्ययाऽऽत्मा च ।

द्रव्याणां गोहिरण्यादीनां मध्ये केषाञ्चिद्दानैरेव शुद्धिर्यथा तथाऽन्नदानादियुक्तजातकर्मादि संस्कारैरेव गर्भाणां शुद्धिरिति दर्शयितुंप्रतिनियतानि शोधकानि दृष्टान्तत्वेनोदाहरति—

१. कालेन — भूम्यादि
२. स्नानेन — देहादि
३. शौचेन — अमेध्यलिप्तादि
४. संस्कारैः — गर्भादि
५. तपसा — इन्द्रियादि
६. इज्यया — ब्राह्मणादि
७. दानैः — द्रव्याणि
८. सन्तुष्ट्या — मनः
९. आत्मविद्यया — आत्मा शुद्ध्यति ।

ननु यद्यानन्दजडोऽभूत्तर्हि स्वयं कर्तुं कालविलम्बं कथं न कृतवान् ? उच्यते पुत्रप्रेम्णैव । कालादिभिर्द्रव्याणि भूम्यादीनि शुद्ध्यन्ति·आत्मातु आत्मविद्यया-

"कालेन स्नान शौचाभ्यां" के द्वारा लोक के किस-किस पदार्थ की कैसे-कैसे शुद्धि होती है आदि बतलाया गया है ।

स्वरूपज्ञानेनैव शुद्धचति । अथवा भगवद्भक्त्यैव-शुद्धचति ।

स्नानादिकर्म नन्द एव नाकरोत् ब्राह्मणा अप्य-कुर्वन् । वीरराघवाचार्यः परमात्मोपासनया आत्मशुद्धि सम्मनुते ।

द्रव्यशब्दः— अनुबन्धिगेहदेहापत्यदेवतापशुहिरण्या-दिवित्तधान्येन्द्रियाभिप्रायकः ।

कालादिनवानां मध्ये काल एव मुख्यः—

सर्वं कालोद्भवमिति । उत्पन्नः पुत्रः शतं वर्षाणि जीवति तत्र दशदिनानि षट्त्रिंशच्छतानामेको भागो भवति । संपूर्णे काले तावान् कालस्त्वशुद्धः । जननादौ कालेनैव शुद्धिः न स्नानादिना । वंशशुद्धिजनकः कालः संपूर्णदेहशोधकं स्नानम् एकदेशस्य लौकिकव्यवहारार्थं शौचम् त्रिधेयंशुद्धिः अदृष्टाद्युत्पत्त्यर्थम् ।

संस्कारैः—जातकर्मादिभिः देहो वैदिककर्मार्थं संस्कृतोभवति । एतेषां भूतसंस्कारकत्वमेव ।

तपः—अन्तःकरणशोधकम् । अदृष्टोत्पत्तिद्वारैव ।

इज्या—यागः तेन भगवान् सन्तुष्यति । एवमाधि भौतिकस्याध्यात्मिकस्याधिदैविकस्य च संस्कारकाणि त्रीणि निरूपितानि । एवं षड्विधैरपि सर्वे शुद्धचन्ति ।

बहिः शुद्धिः—दानैः द्रव्याणि शुद्धयन्ति। दान-व्यतिरेकणे द्रव्याणां न शुद्धिः। लक्षद्वयं दानं गवां शुद्धयर्थमेव। अल्पानि प्राप्तानि सन्तुष्टयैवशुद्ध्यन्ति अतो द्रव्यशुद्धौ द्वयमुक्तं।

आत्मातु जीवः स च सोऽहमस्मीत्यादिरूपयाऽऽत्म विद्ययैव शुद्ध्यति।

विश्वनाथचक्रवर्तिनस्तु परमात्मनः स्वरूपानुभवे न जीव एवेति वदन्ति। अत्र प्रसङ्गे दीपकालङ्कारो-ऽपि। श्रीवल्लभाचार्याः कालेन शब्दस्य भूम्यादि-अर्थ प्रतिपादकाः, विश्वनाथास्तु वर्त्म-इति निरूपकाः। यत्रभूमौ मलाद्युत्सृष्टं तत्र विनापि लेपादिनाशोधकेन बहुकालेन स्वयमेव शुद्ध्यतीत्यर्थः। जलानामपि कालेनशुद्धिः—

कालं मेघोदकं ग्राह्यं वर्ज्यं तु त्र्यहमेवहि।
अकाले दशरात्रं तु ततः शुद्धिः इत्युक्तं॥

× × ×

"ब्राह्मणः सर्वदा शुद्धः पितृदेवार्चनेरतः" इत्युक्तेः।

× × ×

"यतो दानं न जायेत तद् द्रव्यंमलवत्स्मृतम्"

इति स्मृतेर्द्रव्याणामन्नादिरत्नान्तानां दानेनैव शुद्धिर्नान्यथेति ।

इन्द्रियाणि = वागादीनि – तपसा=मौनेनाथवैकादश्यादिव्रतोपवासेन । प्रस्तुताप्रस्तुतानाञ्च तुल्यत्वेदीपकम् अत्र प्रस्तुतगर्भशुद्धेरप्रस्तुतानां भूम्यादीनामपिशुद्धेर्वर्णनादिति समन्वयः ।

सौमङ्गल्यगिरो विप्राः सूतमागधवन्दिनः ।
गायकाश्च जगुर्नेदुर्भेर्यो दुन्दुभयोमुहुः ॥५॥

विप्राः सौमङ्गल्यगिरः, सूतमागधवन्दिनः गायकाश्च जगुः भेर्यः दुन्दुभयः मुहुः नेदुः ।

भेर्यः—आनकभेदा सुषिरभेदाश्च दुन्दुभयश्च[१] । आनकभेदाश्च युग्मत एव हस्ताभ्यां काष्ठद्वयेन वाद्यन्ते नेदुः स्वयमेव । विप्राः स्वस्तिपाठकाबभूवुः । सूतादयो गायकाश्च जगुः (पुराणादीनितिशेषः)सूताः=पौराणिकाः मागधाः=वंशावलीपाठकाः, बन्दिनः=स्तुतिपाठकाः

---

१. वै० तो० ।

"सौमङ्गल्यगिरो विप्राः सूतमागधवन्दिनः ।
गायकाश्चजगुर्नेदुर्भेर्यो दुन्दुभयोमुहुः ॥"
आदि के द्वारा ब्राह्मण वृन्द तथा सूत मागध वन्दीजनों

विजयध्वजाचार्यस्तु स्वकृतस्तुतिपाठकाः सूताः परकृत-स्तुतिजीविनोमागधाः, प्रबन्धस्तुतिपाठकाः वन्दिनः— इति स्वीकुर्वन्ति[१] ।

श्रीधराचार्याः—

सूताः पौराणिकाः प्रोक्ता मागधा वंशशंसकाः ।
वन्दिनस्त्वमलप्रज्ञा प्रस्तावसदृशोक्तयः ॥

स्वीकुर्वन्ति[२] ।

सौमङ्गल्यगिरः—सुमङ्गलता,यैर्वेदैः पौराणैर्वाक्यै-र्मंगलं भवति तच्चनिरन्तरंपठन्तीति सौमङ्गल्यप्रति-पादिकागिरो येषामित्युक्तं गिरां वैयर्थ्याभावो विप्रपदे नोक्तः ।

पौराणिकाः, वंशशंसकाः, वैतालिकाः तेऽपि सौम-ङ्गल्यगिरोजाताः ।

गायका—अन्ये केवलनृत्यादिसहिताश्च ।

स्त्रियश्च—वाद्यवादकाश्चानेदुः ।

भेर्यः—उत्सवसूचिकाः ।

दुन्दुभयः— मङ्गलवाद्यानि-शुभकर्म मात्रेप्रवृत्तानि

१. पं० र०, २. भा० दी० ।

द्वारा नन्द पुत्र जन्मोत्सव के अवसर पर प्रकट की गई अपनी-अपनी प्रसन्नता का वर्णन है ।

मुहुरिति श्रमपर्यन्तं वादयित्वा पुनर्निवृत्ता वादयन्तीति। एतद् वाद्यमपि सङ्गीतशास्त्रसिद्धम् अतोविद्याकार्यं सर्वमुक्तम्।

स्वस्ति नो-मिमीतामश्विनाभगः।
स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः। इत्यादि मंगलसूक्तम्।
पितृचरणास्त्वत्र–शीघ्रगाः
नानाविधाश्चगणका ज्योतिःशास्त्रविशारदाः।
वाक्सिद्धाः पुस्तककराआजग्मुः नंदमन्दिरम्॥

सस्मिता विप्रपत्न्यश्च वयस्याः स्थविरवराः अङ्गिराः, अत्रिः, गौतमः, क्रतुः, प्रचेताः, पुलस्त्यः पुलहः, दुर्वासाः, कर्दमः, वसिष्ठः, गर्गः, जैगीषव्यः देवलः, कपिलः, सनत्कुमारः, सनकः सनन्दः सनातनः, पंचशिखाः, विश्वामित्रः, वाल्मीकिः, वामदेवः, कश्यपः, वृहस्पतिः, शुक्रः, च्यवनः, नरनारायणः, पराशरः, व्यासः, शुकदेवः, जैमिनिः, मार्कण्डेयः, लोमशः, कण्वः, कात्यायनः, भृंगः, विभाण्डकः, पौलस्त्यः, अगस्त्यः, शृंगी, शमीकः, अरिष्टनेमिः, मांडव्यः, पैलः, पाणिनिः, कणादः शाकल्यः, शाकटायनः, पैप्पलादः, मैत्रेयः,

---

इस प्रसंग पर पितृचरण श्री श्रीवरजी शास्त्री का कथन है कि नन्दराय के मङ्गलमय इस पुत्र जन्म के अवसर पर उक्त

गौरमुखः, भरद्वाजश्च एते ब्राह्मणाः सशिष्याः आजग्मुः ।

देवाः सवाहनाः समागताः—

रथारूढो रविः साक्षाद् गजारूढः पुरन्दरः ।
बाहुश्चखंजनारूढो मृगारूढः क्षपेश्वरः ॥
अजारूढो वीतिहोत्रो वरुणो मकरस्थितः ।
मयूरस्थः कार्त्तिकेयो भारती हंसवाहनी ॥
लक्ष्मीश्चगरुड़ारूढा दुर्गा च सिंहवाहनी ।
गोरूपधारिणी पृथ्वी विमानस्था समाययौ ॥
मंगलोवानरारूढो मासारूढो बुधस्तथा ।
गीष्पतिः कृष्णसारस्थः शुक्रो गवयवाहनः ॥
शनिश्चरो महिषारूढ उष्ट्रस्थः सिंहिकासुतः ।
श्येनारूढस्तथाकेतुः मूषकस्थो गणेश्वरः ॥

देवाः नन्दनन्दनमहोत्सवे समागताः ।

विप्राः—हे नन्द ! ते गेहे धनधान्यवृद्धिरचला स्यात्, आरोग्यं भवतु, तव यशः लोकत्रयं व्याप्नोतु ।

वचन के अनुसार पुस्तकों को हाथ में रखने वाले ज्योतिष शास्त्र में पारंगत सिद्ध वाणी अनेक ब्राह्मण, ऋषि-महर्षि ब्राह्मण पत्नियाँ, सूर्य चन्द्र आदि सभी ग्रहगण उपस्थित हुए और नन्दराय को अनेक प्रकार के आशीर्वचनों द्वारा सत्कृत किया ।

दीर्घायुष्यं भूयात् । चण्डांशुवत् कांतिश्च भूयात्, वन्हि-समं तेजः स्यात्, शतक्रतुसमं वीर्यं ते तनूजस्य भवेत्, शतक्रतुसमं वीर्यं भवेत्, वाक्पतिसमं बुद्धिः, विधुवत् यशः, वित्तेशवत् वित्तम् भवेत् । द्विषः नाशं प्रयान्तु—

नित्यं ते धनधान्यवृद्धिरचला गेहे तथा कौशलम् ।
सन्तन्वन्तु हविर्भुजाधिपतयो नाशं प्रयान्तु द्विषः ॥
हे राजेन्द्र व्रजाधिपेन्द्र सततं मान्योऽसि पूज्योऽसि च
देवेन्द्रैरपि निर्गुणोऽपि भगवान् प्रादुर्बभूवाद्यते ॥

मूर्तिमानानन्दश्च नन्दगृहेजातः । कीदृशः स—आत्मारामात् स्वकीयैर्मधुरचरितैर्भक्तियोगेविधास्यन्, रसरचनया स्वभक्तान् आनन्दयिष्यन्, दैत्यानीकैः भुवमतिभरां वीतभारां करिष्यन् व्रजपतिगृहे जातः ।

आत्मारामान्मधुरचरितैर्भक्तियोगेविधास्यन् ।
नानालीलाविधास्यन् रसरचनयानन्दयिष्यन् स्वभक्तान्

नन्दराय के घर मूर्तिमान् आनन्द ने इसी कारण जन्म धारण किया है कि उन्हें व्रज में अपने अलौकिक चरित्रों द्वारा आत्माराम योगियों को भक्ति-भावना चरित करना है, भक्तों को अपूर्व आनन्द से आनन्दित करना है, दैत्यों के भार से आक्रान्त पृथ्वी या इस धराधामको उनके उस भारसे शून्य करना

दैत्यानीकैर्भुवमति भरां वीतभारां करिष्यन् ।
मूर्तानन्दो व्रजपतिगृहे जातवत्प्रादुरासीत् ।।

× × ×

अनाघ्रातं भृङ्गैरनुपहतसौगन्ध्यमनिलै-
रनुत्पन्नं नीरेष्वनुपहतमूर्मिकणभरैः ।।
अदृष्टं केनापि क्वचन च चिदानन्दसरसो ।
यशोदायाः क्रोडे कुवलयमिवौजस्तदभवत् ।।

नहुषस्येव ऐश्वर्यम् विष्णोरिवविजयः । अम्बरीष इव श्रद्धा, अर्जुन इव धनुर्विद्या, अम्भोनिधेरिव गाम्भीर्यम्, बलिकर्णयोरिव दातृत्वम् भूयात्—

ऐश्वर्यं नहुषस्यविष्णुविजयः श्रद्धांबरीषस्य च ।
पाण्डित्यं धनुषश्च पाण्डुजनुषोगाम्भीर्यमम्भोनिधेः ।
दातृत्वं बलिकर्णयोस्त्रिजगति भूयात् सदा शोभनम् ।
तस्य श्रीव्रजराजनन्दनृपतेस्साम्यं समुन्मीलतु ।।

मागधनाम्नोजना इतिलोके प्रसिद्धाः ।

है । जैसा कि "आत्मारामान्मधुरचरितै र्भक्तियोगे विधास्यन्" आदि वचनों से स्पष्ट है ।

नन्दराय के द्वार पर इस मङ्गलमय अवसर पर आने वाले मागधजनों द्वारा उनके लिये जो नन्दराय को सब ओर से पूर्ण बनाने के वचनों का प्रयोग किया गया है, उसका उल्लेख

मागधाः ऊचुः–

आभीरो नृपतिर्बभूव तदनु श्रीकंजनाभस्ततः ।
तत्सूनुर्भुवि चित्रसेन उदितः श्रीदेवमीढस्ततः ॥
पर्जन्यस्त्वभवन्नृपोदितगुणस्तस्माद्धिनन्दोऽभवत् ।
श्रीमन्नन्द-नृपान्वयांबुधिविधुर्जातस्त्वयं बालकः ॥

आभीरः
|
कंजनाभः
|
चित्रसेनः
|
देवमीढः
|
पर्जन्यः
|
नन्दः

अजमीढस्य भार्ये द्वे वैश्यानी क्षत्रियापरा
क्षत्रियाण्यां सूरसेनो वसुदेवस्ततोऽभवत् ।
वैश्यान्यामासपर्जन्यो नन्दराजस्ततोऽभवत् ॥

किया गया है और नन्दराय के पूर्वजों का नामोल्लेख किया गया है। नन्दराय की इस वंश परम्परा का वर्णन आगे भी तक चलता है।

मंगलामृतपर्जन्यः पर्जन्योनामवल्लभः
वरिष्ठोऽमृतगोष्ठीनामेषकृष्णपितामहः ॥

पितामही–वरीयसी
मातामहः–सुमुखः
मातामही–पाटला
पितृव्यदयिताः–तुंगी, पीवरी, वकुला, अतुला, रोहिणी ।
जामयः–सुनन्दा, नन्दि, आनंदी, मंदिरा ।
पितृव्यजाः–सुभद्रा, कुंडला, दंडी, मंडना ।

वरीयसीति विख्याता महामान्या पितामही ।
मातामहो महोत्साहः स्यादस्य सुमुखाभिधः ॥
ख्यातामातामही गोष्ठे पाटला नामधेयतः ।
पिता व्रजार्चितो नंदो-नन्दो भुवनवन्दितः ॥
मातागोपयशोदात्री यशोदा-मोदमेदुरा ।
पितृव्य दयितास्तुंगी पीवरी वकुलातुला ।
रोहिणी वृहदम्बास्यात् प्रहर्षा रोहिणीसदा ॥
सुभद्रा कुंडलादंडी मंडनामी पितृव्यजाः ।
सुनन्दानंदिरानन्दी मंदिराद्यास्तपोमयाः ॥

वन्दिन ऊचुः–

श्रीव्रजराज तवाहं वन्दी
श्रुत्वाजन्म सुतस्यानन्दी

कल्पतरोरिवभवतोरीतिः
याचकदीनजनेष्वतिप्रीतिः
मणिमयगिरितिलसप्तकदानं
विविधमकारि नरेशसमानं
नानावर्णगवामपि वृन्दं
हेमशृंगराजतखुरकंदं
राजति-पट्टपटालिदधानं
वत्सीवत्सयुतं-सविधानं
भूषाभूषितकण्ठप्रदेशं
केकिपिच्छततिरचितसुवेशं
शश्वदकारि धरासुतततये
वेदपुराणविशोधितमतये
मौक्तिककनकवज्रमणिवर्षं
घन इव मह्यमकारिसहर्षम् ॥

गायकाश्च जगुः—

पुत्रमुदारमसूत यशोदा
सर्वजनवल्लवततिरतिमोदा
कोऽप्युपनयति विविधमुपहारं
नृत्यतिकोऽपिजनो बहुवारं

वन्दीजनों द्वारा प्रकट किये विचारों का वर्णन है ।

कोऽपिमधुरमुपगायतिगीतं
विकिरतिकोऽपिसदधिनवनीतम्
कोऽपि तनोतिमनोरथपूर्तिं
पश्यतिकोऽपिसनातनमूर्तिं
विप्रवृन्दमभूदलंकृतगोधनैरपिपूर्णं
गायकानपिमद्विधान् व्रजनाथप्रतोषयतूर्णं
सूनुरद्भुतसुंदरोजनिनंदरायतवार्यं
देहि दीनजनायवांछितमुत्सवोचितदायम् ।
श्रीसनातनचित्तमानसकेलिनीलमराले
मादृशां रतिरत्रतिष्ठति सर्वदा तव बाले ।
जयजय भानुसुता नटरंग महानट सुन्दर नंदकुमार
शरदंगोकृतदिव्यरसावृतमंगलरासविहार–
गोपीचुंबितरागकरंबितमानविलोकनलीन
गुणवर्गोन्नतराधासंगतसौहृद्संपदधीन
तद्वचनाकृतया न मदाहृत अल्पीकृत परिवार
सुरतरुणोगणमतिविक्षोभन खेलन वलिवलिहार
अंवुविगाहन नंदित निजजन मण्डित यमुनातीर
सुखसंचित धनपूर्ण सनातन निर्मलनीलशरीर ॥

गायकों के गान का रूप देखने को मिलता है, जो अनेक सुन्दरतम पद्यों में बद्ध है।

अन्ये तुम्बुरुनारदादयो गंधर्वविद्याधरसिद्धचारणाः जगुः उक्तमपि—

तत्रागतास्तुंबुरुनारदादयो
गंधर्वविद्याधर सिद्धचारणाः ।
जगुर्यशोलोकमलापहं हरेः
सुरांगनाः संननृतुर्मुदान्विताः ॥

कृष्णजन्मोत्सवे एषामागमनं युक्तमेवेति । रास-महोत्सववत् सर्वरागाः, रागिण्यश्च सतालाः स्वराः ध्रुवादयस्ताला जातयः स्वमूर्च्छनासंगीतादयश्च मद्र-मध्यमतारप्रभृतिभेदा-रागप्रभेदाश्च स्वरूपभूताः भूप-भूपति नंदानंदसदनेऽनुरूपभूतं भूतं तदद्भुतरूपं बालकं द्रष्टुमागताः—

एकं ब्रह्म, द्वावश्विनौ कुमारौ

तुंबुरू नारद आदि गंधर्व, विद्याधर सिद्ध चारण आदि का गान व नृत्य वर्णित है जैसाकि "तत्रागतास्तुंबरू नारदादयो गंधर्वविद्याधरसिद्धचारणाः जगुर्यशोलोकमलापहं हरेः सुरांगनाः संननृतुर्मुदान्विताः" स्पष्ट है। इसी अवसर पर समस्त राग-रागिनी, स्वर ताल और मूर्छना आदि संगीत प्रकार के माध्यमों का आना भी वर्णित है, जो अपने-अपने स्वरूपों को धारण करके उपस्थित हुए हैं।

त्रयोगुणाः। त्रयोदेवाः ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वराः। चत्वारो-वेदाः, पंचमहाभूतानि। षट् शास्त्राणि रसाश्च सप्त-समुद्राः सप्तमुनयः। अष्टौ वसवः नवग्रहाः नवरसाश्च दश ककुभोदिक्पालाश्च। एकादशरुद्राः। द्वादशा-दित्यास्त्रयोदशेन्द्रियदेवाश्चतुर्दशेन्द्राः, पंचदशतिथ-यस्तदभिमानिदेवाश्च षोडशकलाश्चसप्तदशपुराणानि। अष्टादश धर्मर्मूर्तिप्रभेदाः तत्त्वानि च स्वरूप भूताः श्रीनन्दनन्दनदर्शनार्थमाजग्मुः।

वेदान्तानि च वेदाश्चमंत्रास्तंत्राः समूर्तयः।
दशसप्तपुराणानि षट् शास्त्राणि तदाययुः॥

नन्दराय के पुत्र जन्म के पुनीत अवसर पर इन सबके अतिरिक्त १ ब्रह्म, २ अश्विनीकुमार, ३ गुण, ४ वेद, ५ महाभूत, ६ शास्त्र और रस, ७ समुद्र और मुनि, ८ वसु, ९ ग्रह, १० दिशाएँ और दिग्पाल, ११ रुद्र, १२ आदित्य, १३ इन्द्रियों के देवता, १४ इन्द्र, १५ तिथियाँ और तदभिमानी देवगण, १६ कलाएँ, १७ पुराण और १८ धर्ममूर्त्तियों के प्रकार और तत्व श्रीनन्दनन्दन के दर्शनार्थ स्वरूप धारण कर आ उपस्थित हुए। जैसाकि— "वेदान्तानि च वेदाश्च मन्त्रास्तन्त्राः समूर्तयः। दश सप्त पुराणानि षट् शास्त्राणि तदाऽययुः॥" से स्पष्ट है।

नन्दराय के घर पुत्र जन्म की खुशी के इस अवसर पर

इति श्रीभागवतमाहात्म्योक्तत्वात् श्रीनन्दनन्दन-चरित्र श्रवणार्थमेव मूर्तिसहिता एव सर्वे समागताः। तर्हि श्रीनन्दनन्दनस्य साक्षात्स्वरूपभूतस्य दर्शनार्थं तेषामागमनन्तु युक्तमेवेतिसिद्धान्तः।

तथाचात्र वादित्राणि सर्वाण्येव भेरी दुन्दुभयंश्चापि नेदुः। व्रजेप्रेमानन्दवशात् स्थावरजंगमयोर्विपरीतधर्म-व्यक्तिः सुष्पष्टेतिदिक्।

"अहेरिवगतिः प्रेम्णः स्वभावकुटिला भवेत्॥"

एवं सर्वतो गायकानां विचित्रस्वरनिनादैर्ध्वनिभिश्च-शैलगजकाननादयोऽपि श्रीमन्नन्दमहोत्सवानन्दवशा-न्माणिक्यमौक्तकप्रभृतिवस्तूनि मिलित्वैवप्रकटतया-धारयामासुः—

अकृष्टपच्यौषधयो गिरयो विभ्रदुन्मणीन्।
नानारसौघा सरितो वृक्षा आसन् मधुश्रवाः॥
इत्यवाद्यन्तवाद्यानि वाद्याधिष्ठातृदैवतैः।
व्रजः प्रकटतांयातस्तत्र कृष्णश्चसंगतः॥

इत्यादि (रसिया)—

भेरी दुन्दुभी आदि अनेक प्रकार के बाजे बजने लगे तथा बिना हल चलाये खेती तैयार हो गई, पर्वतों ने सुन्दर मणियों को धारण किया, नदियाँ रस समुदाय से पूर्ण हो गई तथा वृक्ष

तथा प्रादुर्भूतोनन्दानन्दः प्रादुर्भूतो नंदानंदः ।
भो लोकाःसंश्रृणुध्वं हरिच्चरणरतिं संवृणुध्वम् ।
तस्मादस्माभिरत्र प्रभुपदविरहादाप्तमंतः पशूनाम् ।
जन्यात्पाखण्डदंडात्तदनुगतिमृतेरानकत्वेतिपीडा ।
एतद्धि श्रीव्रजेशालयमहिप्रभवादाप्तमंतःसुखं वै ।
नंदानंदः प्राभूतो जगतिविजयते सर्वदानर्मदोऽस्मान् ।।
इत्यादि ।।

एवंतत्रवादित्राणां मध्ये सारंगी संगीतरागिणी तरंगिणोनां मध्ये सारंगायंतीव बभूव ।

एवं मृदंगध्वनिरपि मृदंगतयागतयाऽमृतयाधिक्ता-न्धिक्तानितिवदंती सती प्रेमतोमृदुरुदन्तोवसर्वतस्तुत्पर्वा ………नर्मदोह्याविरासीदितितथोक्तम्—
येषां श्रीमद्यशोदा सुतपदकमले नास्तिभक्तिर्नराणाम्
येषामाभीरकन्याप्रियगुणकथने नानुरक्तीरसज्ञा ।

मधु की वर्षा करने लगे। जो "अकृष्टपच्यौषधयः" आदि से स्पष्ट है।

नन्द द्वार पर कृष्ण जन्मोत्सव की खुशी में बजने वाले बाजों में मृदंग की ध्वनि नन्दनन्दन के चरणकमलों में भक्ति-शून्य आभीर कन्याओं द्वारा किये गये उनके गुण वर्णन में अनु-राग रहित, कृष्णलीला के ललित-पदों के श्रवण में आदर न

येषां श्रीकृष्णलीलाललितपदकथासादरौनैवकर्णौ
धिक्तान्धिक्तांश्च धिक्तानिति वदतिरवं ह्युत्सवस्थोमृदंगः
आगत्यानंदसंदोहा उपनंदपुरः सराः
गंभीरास्तेऽपि चाभीराः विजह्रुर्ननृतुर्जगुः।

गोप्यः जगुः तत्र पदगानम्—
जग्मुर्व्रजराजगृहे गोकुलकुलबाला ।
तरलवलयपीवरकुचमौक्तिकमणिमालाः ।
पाटलललितदशनचारुरुन्नतभ्रूनासाः ।
आदिपुरुषविशदगानपूरितसकलाशाः ।
सुखमश्रुतिकुंडलयुगमंडितशतलीला ।
श्रीमद्व्रजनायकसुतवीक्षणकृतशीलाः ।

कीदृशमिदम् नन्दमन्दिरम्—
नानामंजुलरंगमण्डपकृतैर्नानामणिमन्दिरै-
र्नानारत्नमयै र्भुवःपरिसरौ त्रियत्नरत्नांकुरैः।
क्वापिक्वापि व्रजस्थली सुललिता कृत्स्ना वितृष्णामयी
वैचित्री नहि तत्र धातृविहिता नित्यैव सा चिन्मयी ।।

करने वाले लोगों को अपनी धिक् तान् धिक् तान् ध्वनि से फटकार रही है तथा उपनन्द आदि सभी गोपवृन्द आकर नाच-गान में विभोर हो रहे हैं।

अत्रापि विशेषो यथा—

शतशैर्हेमकलशैर्विमानैस्तोरणैः शुभैः ।
अनेकवर्णैश्चित्रैश्च बभौ श्रीनन्दमन्दिरे ॥
चामीकरमयी भूमिश्चित्रवर्णैर्विचित्रिता ।
मणिस्तम्भशतैर्मुक्तावितानशयनासनैः ॥
विराजितं विद्रुमाणां सोपानैः सुमनोहरैः ।
सुगन्धनीरसंसिक्तचन्दनागुरुधूपितम् ॥
मनोरमं सखीनांतु मनोनयनवर्द्धनम् ।
षडूर्मि रहितं शश्वदनित्यं दोषादिवर्जितम् ॥

कांडं मारकितं प्रभूतविटपाः शाखाः सुवर्णात्मिकाः ।
यत्रास्ति कुरविंद कंदलमयी प्रावालकाः कोरकाः ॥
पत्राणां निकरः सहीरकमयो वैडूर्यको यत्फलं ।
श्रेणीयस्यसकोऽपि शाखिनिकरो यत्रास्ति मात्रोज्वलः ॥

येषां रत्नमयालवालवलयक्रीडादिभिर्नित्यशः ।
पत्रेषु प्रतिबिम्बतो ह्यु भयतोविस्तारवच्छ्रेणयः ॥
ये वैचित्रपवित्रपत्रनिकरैः सर्वत्र मैत्रीयुषः ।
कामं कामदुघोऽखिलक्षितिरुहास्त्रैलोक्यलक्ष्मीषुषः ॥

गोपियों द्वारा पद गान और नन्द मन्दिर की प्रशंसा-पूर्वक उसका वैशिष्ट्य वर्णन ।

व्रजः संमृष्टसंसिक्तद्वाराजिरगृहान्तरः ।
चित्रध्वजपताकास्रक्चैलपल्लवतोरणैः ॥६॥

द्वारश्च अजिरश्च गृहान्तरश्च द्वाराजिरगृहान्तराणि संमृष्टानि संशोधितानि संसिक्तानि चन्दनजलादिना-प्रोक्षितानि द्वारादीनियासां तास्तथा, चित्रध्वजपताकया-स्रक्चैलपल्लवैश्चैव युतास्तोरणा यासां तास्तथा ।

गृहान्तराणि=गृहमध्यानीति श्रीधरः ।

संमृष्ट–संसिक्तपदयोः सम् उपसर्गः अन्यदिनेभ्यः वैशिष्ट्यबोधकः ।

चैलानि=खण्डितवस्त्राणि । पताकानां रूजोमाला कारेण सन्निवेशाः भूषितः (इत्यध्याहारः) यद्वा स्रजः पुष्पमालाः चित्राणि विविधानि यानि ध्वजादीनि तैः सममन्यत्[१] ।

अस्मिन् श्लोके भूसंस्कारवर्णनम्–गृहान्तराणि-गृहमध्यंगृहाः, अन्तराणि च तदुपरि भागानामपि मार्जनं भवति एतादृशो ब्रजोजातः । चित्रध्वजादि-भिरपि युक्तोजातः । एते बहिः शोभाजनकाः गरुडादि-

१. वै० तो० ।

के अनुसार व्रज की सजावट का वर्णन किया गया है ।

चिह्निताध्वजाः जयपत्राङ्किताः पताकाः वस्त्रादिभिर्या-
वान् अलंकारो भवति स सर्वोऽपितत्रकृत इत्यर्थः[१]
त्रिविधैस्तोरणैर्विभूषितोऽभूद्व्रजः[२] [इतिशेषः] चित्र-
ध्वजपताकाभ्यां तथा चित्राणां स्रजांचैलानां चैल-
खण्डानां पल्लवानां चेति ।

गावोवृषा वत्सतरा हरिद्रातैलरूषिताः ।
विचित्रधातुबर्हस्रग्वस्त्रकाञ्चनमालिनः ॥७॥

गावो–बलीवर्दाः धेनवश्च ।

वृषाः–वृषास्तु स्थूलककुदोमहान्तः ।

चकारादवान्तरभावापन्नावृद्धाश्च वत्सावत्सतर्यश्च
सर्वे हरिद्रायुक्ततैलेन रूषिता विचित्रा गौरिकादि
धातवः बर्हाणि-मयूरपिच्छानि वस्त्राणि काञ्चनमालाश्च
ते वर्तन्ते येषां हरिद्रातैलं मंगलार्थे, धात्वादयः
शोभार्थाः ।

महार्हे वस्त्राभरणकञ्चुकोष्णीषभूषिताः ।
गोपाः समाययूराजन्नानोपायनपाणयः ॥८॥

१. सुबो०, २. सा० द० ।

के अनुसार गाय, वृषभ, वत्स, वत्सों आदि का हल्दी
तैल आदि द्रव्यों द्वारा सजाया जाना वर्णित है ।

तदेवं सर्वस्यैव गोकुलस्थ-श्रीनन्दयशोदे प्रति परम-मनुरागं दर्शयति महार्हेत्यादि सप्तभिः श्लोकैः।

महार्हैं बहुशुल्कैर्वस्त्रादिभिर्भूषिताः अलंकृताः नानाविधानि उपायनानि पाणिषु येषां ते।

गोप्यश्चाकर्ण्यमुदिता यशोदायाः सुतोद्भवम्।
आत्मानं भूषयाञ्चक्रु र्वस्त्राकल्पाञ्जनादिभिः॥

(नन्दो० ९)

गोपानां स्त्रियोऽपि यशोदायाः सुतोद्भवमाकर्ण्य मुदिता हृष्टाः वस्त्रादिभिरात्मानमलञ्चक्रुः।

अकल्पाः—भूषणानि

आदि शब्देन चन्दनलेपादि संग्रहः।

अनेक प्रकार के वस्त्राभरणों से विभूषित एवं अनेक प्रकार के उपायनों को ले लेकर नन्द द्वार पर उपस्थित होना वर्णित है।

'गोप्यश्च'के अनुसार गोपांगनाओं द्वारा नन्द यशोदाके घर पुत्रोत्पत्ति के सुनने के अनन्तर अधिक प्रसन्नता के साथ अपने को अलंकृत करना वर्णित है। इस प्रसङ्ग पर श्रीमद्वल्लभाचार्य ने गोपियों का चतुर्विधत्व स्वीकार किया है, जिनमें संबद्ध असंबद्ध तथा संगत असंगत आदि का वर्णन किया है तथा अप-

अत्र श्रीवल्लभाचार्याः गोपीनां चतुर्विधत्वं स्वीकुर्वन्ति। चतुर्भिः श्लोकैः—

गोप्यश्चतुर्विधाः सम्बद्धा असम्बद्धाश्च

सम्बद्धाः — संगताः, असंगताश्च
असम्बद्धाः — संगताः, असंगताश्च
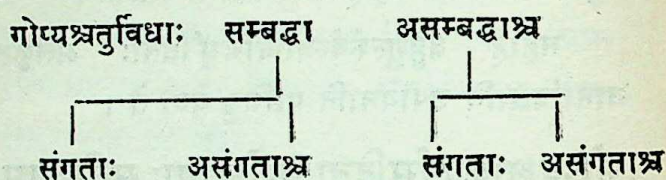
चकारादन्या अपि तत्रतत्रनिलीनाः तथा विधाभूत्वा याता।

ब्राह्मणाः स्त्रियः अन्याश्च तासां नन्दप्राधान्याभावात् यशोदाया अपत्योत्पत्तिसम्भावना रहितायाः सुतस्य अकस्मादुद्भवं श्रुत्वा श्रवणेनैवान्तःसन्तोषस्तासां जातः चतुर्विधपुरुषार्थस्तासां विशेषाकारेण सेत्स्यतीति। आकर्ण्यैव मुदिता नतु निश्चयमप्यपेक्षन्ते तासां निवेदनीयआत्मैवेति आत्मानमेवभूषयाञ्चक्रुः। आत्मपदप्रयोगश्च शरीरादीनामप्यविकृतत्वाय सशरीराणामेवब्रह्मानन्दानुभवात्। उत्तमानि वस्त्राणि परिधाय तथा आकल्पान्याभरणान्यपि अञ्जनं कज्जलम् आदि शब्देन तिलकमाल्यादीनि।

त्योत्पत्ति की संभावना से शून्य नन्द यशोदा के घर पुत्रोत्पत्ति को सुनकर उससे अत्यधिक सन्तुष्ट होना वर्णित है।

आदिना-ताम्बूलसुगन्धादि संग्रहोऽपि[१] ।

नवकुंकुमकिञ्जल्कमुखपङ्कजभूतयः ।
बलिभिस्त्वरितं जग्मुः पृथुश्रोण्यश्चलत्कुचाः ॥१०

नवाः कुंकुमकिञ्जल्का येषु तेषां मुखपंकजानां भूतिः श्रीः शोभायासांताः कुंकुमानां किंजल्कत्वरूपणेन मुखानां पंकजत्वरूपणं पुष्कलं पृथुश्रोण्यः पृथुजघनाः चलन्तौ कुचौ यासां ता बलिभिरुपायनैः सहितास्त्वरितं यथा तथा जग्मुः ।

पृथुश्रोण्योऽपि त्वरितं जग्मुः तत्र चलत्कुचा-इत्यतिशयस्यलक्षणं सर्वं चोत्कण्ठातिशयस्येतिज्ञेयम् ।

अत्राचार्याः—ताः सर्वा देवतारूपाः भगवत्सम्मुखे गच्छन्त्यो विकसितवदना जाताः ।

स अलौकिकोविकास इतितं वर्णयति—चर्वित-ताम्बूलाः, सुलक्षणवशाद्वा आरक्तरेखायुक्ताः मुखभागा-स्तासां नूतनं कुंकुमं काश्मोरं तस्य येकिञ्जल्काः उत्तमाः

१. सि० प्र० ।

"नवकुंकुमविजल्क" के अनुसार गोपियों द्वारा अपने आत्मा को सजाकर अनेक उपायनों के साथ नन्द द्वार पर उप-स्थित होने का वर्णन है ।

आरक्ताः त एव योजिताः तिलकादौ, पिष्ट्वा रेखाकाराः कृताः एतादृशानिमुखपङ्कजानि तैं भूतिर्यासाम् ।

गन्धोरूपं तथा स्पर्शः कटाक्षभ्रमरोक्तयः ।
ताभिश्चतुष्टयं ज्ञेयं रसं ज्ञास्यति माधवः ।।

बलि पूजासाधनानि स्रगादीनि यद्यपि सर्वस्वमेव ज्ञेयं तथापित्वरितं जग्मुः ।

कुचयोः चलनं गमनं प्रतिबन्धकं भवति बलिभिः स्वर्णरत्नादिभिर्युता इति वंशोधरमिश्राः ।

गोप्यः सुमृष्ट मणि कुंडलनिष्ककण्ठ्य-
श्चित्रांबराः पथिशिखाच्युतमाल्यवर्षाः ।
नन्दालयंसवलयाव्रजतीर्विरेजु-
र्व्यालोल कुंडलपयोधर हार शोभाः ।।११।।

सुमृष्टान्युज्ज्वलितानि मणिमयानि कुंडलानि यासां ताः । निष्काः पदकानि कंठेषु यासांताश्च । शिखाभ्यश्च्युतानि माल्यवर्षाणि यासां ताः । नंदालयं व्रजतीर्व्रजंत्यः पथिविरेजुः । सवलयाः कंकणभूषिताः । व्यालोलैः कुंडलादिभिः शोभायासां ताः ।

नन्द के घर पुत्रोत्पत्ति की खुशी में गाने वाली गोपियों द्वारा धारण किये गये आभूषणों से उनका सौन्दर्य वर्णित है ।

गोप्य इति—पुनर्ग्रहणमग्रपश्चाद् भावेन समागतानां सम्भूयगमनार्थं नन्दालयं व्रजतोर्विशेषेण रेजुः। पूर्वं पिहिताभरणा अपि प्रकटाभरणा जाताः।

ता आशिषः प्रयुञ्जानाश्चिरं पाहीतिबालके।
हरिद्रा चूर्ण तैलाद्भिः सिंचन्त्योजनमुज्जगुः॥१२

ता गोप्यः बालके चिरंपाहीति-आशिषं प्रयुंजाना हरिद्राचूर्णतैलादिभः जनं सिञ्चन्त्य [अजनम्] उज्जगुः।

आशिषंप्रयुंजानेतिकिम्—

राजपुत्रत्वाद्राजा भूत्वा चिरं पाहीति।

"परस्येष्टार्थप्रशंसनमाशोः" इति लक्षणात्।

पाहीत्यस्मानिति शेषः। गोपीनामुल्लासोक्तिः तस्य सार्वदिकीं सर्वसम्पत्तिमात्मना संगतिमात्मनि प्रीतिं चाशासते अल्पार्थे कः अत्यन्तबाल्यात्बालक इति तदानीं तस्मिन्तदेवोचितमितिभावः।

यद्वा बालकेऽपि ततश्च प्रेमस्वभावादेवेति अजनम्=

"ताः आशिषं प्रयुञ्जानाश्चिरं पाहीति बालके" बालक नन्दनन्दन को आशीर्वाद देती हुई गोपियाँ बढ़े हुए उल्लास के साथ दधिमिश्रित जल और हरिद्रा चूर्ण आदि पदार्थों को एक

भगवन्तमुज्जगुः= उच्चैर्मङ्गलगीतप्रबन्धेनबालकमंगलार्थं तमकीर्तयन् ।

अद्भिः—दधिमिश्रोदकैः ।

यद्वा बालके श्रीनन्दनन्दने आशिषः प्रयुञ्जानाः अजनम्=विष्णुमुज्जगुः ।

श्रीमदचार्याः–गोपीनां भगवदावेशत्वात् आशिषो-निर्गताः—'चिरंपाहीति' बालकेआशिषो न परोक्षतया निरूपयन्ति किन्तु प्रत्यक्षतयेतिपाहीति मध्यमपुरुष-प्रयोगः तासां सर्वभावेन पालनमल्पकालएवेति ज्ञात्वा बहुकालरक्षार्थं प्रार्थना । एतदपि प्रत्येकं वचनं तासां प्रत्येकं भगवत्स्फुरणात् एवमाशिषः प्रयुञ्जानाः भगवद्-भावेनात्यन्तंमत्ताः हरिद्राचूर्णतैलजलान्येकीकृत्यपर-स्परंसिञ्चन्त्यः अजनमुज्जगुः । हरिद्राचूर्णयोर्मेलने

दूसरे पर छिड़कती हुई जो भगवान् के यश का गान कर रही हैं, इस प्रसंग पर उसी का वर्णन किया गया है ।

"ताः आशिषं प्रयुञ्जानाश्चिरंपाहीति बालके" के अनु-सार श्रीमदाचार्यचरण गोपियों में भगवदावेश मानकर ही उनके द्वारा बालक को आशीर्वाद दिये जाने की योग्यता मानते हैं ।

आरक्तोवर्णो भवति तैलेन च सम्पृक्तो न कदापि त्यजति । बहुकालमिममर्थं ज्ञापयति जलेयोजितः प्रसृतो भवति ।

ननु कुलस्त्रीणां कथमेवं भावस्तत्राह अजनमुज्जगुः । भगवद्भावज्ञापकमजनपदं स हि भगवांस्तत्र न जात इतिताभिर्ज्ञातमतो भगवति प्राप्ते सर्वापेक्षाभावात् तथा सिञ्चन्त्य उच्चैर्जगुः ।

एवं विधावतां भूमेर्गवां गोपानां गोपीनां चालङ्कारा निरूपिताः१ ।

याः खलुपूर्वंतदपत्यसम्पत्त्यभावान्निर्वेदवेदनया त्यक्तप्रायःपरिष्काराः, सम्प्रतितु किञ्चिच्छ्रवण-प्रवण-तदपत्यश्रवणमात्रेणविधृत - विविधसुखविकारास्तत्पर्व-रञ्जनार्थं विलम्बनीयामपि परिष्कृतिमुररीकृत्य नृत्यन्त्य इवतत्पुरीं प्रति चलिताः,याश्च व्यञ्जिजजिषित–मङ्गल-सङ्गतयास्नेहमयकामनापरिणामतया च स्वयमेव महा-मणिमयोपायनपाणयो बभूवुः–यासामानन्दादन्यदेव-शोभावैभवमाविर्भवति स्म । तथाहि—

१. सुबो० ।

नन्द यशोदा के घर पर जिन गोपियों के सन्तति के अभाव के कारण दुःखजनित वैराग्य से सुन्दर वस्त्राभूषणों का धारण करना छोड़ दिया था, वे इस पुत्रोत्पत्ति के अवसर पर

जितकुंकुममुरुरुचे, मुखशशिनारोचिरेतासाम्-
समुदितमुदितं पर्वणि, सुतजनुषः श्रीयशोदायाः ।

गानम्—

अजनियशोदानिशिसुतसारम्
इतिमहिलालिरिता तदगारम् ।
सम्भ्रमविरचित बहुविधवेशम्
पथिमाल्यच्यवपूरितदेशम् ।
चलमणिकुण्डलवलितकपोलम्
अपरिकलितगलदंशनिचोलम् ।
उच्छलितच्छविचपलाहारम्
चित्रवसनवसरसनावारम् ।।

किञ्च—

व्रजःप्रकटतांयातस्तत्रकृष्णश्चसंगतः
इत्यवाद्यन्तवाद्यानि वाद्याधिष्ठातृदैवतैः ।
तस्मादानन्दसन्दोहादुपनन्दपुरः सराः
गम्भीरास्तेऽपि चाभीरा विजह्रुर्ननृतुर्जगुः ।

आनन्दोत्पत्ति के कारण सुन्दर-सुन्दर वस्त्राभूषणों से अपने को सजाकर नन्दद्वार पर उपस्थित हो रही है और वहाँ पहुँचकर खुशी आनन्द में माङ्गलिक पदों का गान कर रही हैं, गान का यह प्रसंग आगे तक चलता है ।

तदातत्रागतायोषास्तं सदाशीर्भिरर्भकम्
निर्वर्ण्यवर्णयित्वा च परस्परमिदं जगुः ॥

यानम्—

पाहि चिरंव्रजराजकुमार,
अस्मानत्रशिशोसुकुमार ॥ ध्रु०

द्रुततरवृद्धिसमृद्धिगतेन
शंभवतादु भवताभिमतेन।

स्पृहयामस्ते हसितमुखाय
अङ्कणसंगतरिङ्गसुखाय ॥

गोबालावलिलूमालम्बि
चलनं तव वसतावमलम्बि।

सहगोशावकगमरमणेन
सुखयसि हन्त कदाकमनेन ॥

गोगणचारणविहरणमस्य,
स तु पश्येद्वरभाग्यं यस्य।

दुष्ट-कदन-दद-सुष्ठुबलाय,
भव शिष्टालिविशिष्टफलाय ॥

इतिसंगीतसङ्गिन्योरङ्गिण्योमहसम्पदि
पीतातलेनसिञ्चन्त्यः सिञ्चन्त्यः प्रययुर्बहिः।

ततः—

दधिदुग्धादिसेकेन मिथोऽमी शुभ्रतांगता
तरङ्गा इव दुग्धाब्धेरनृत्यन् वरगोदुहः ॥

अथ तास्तदवधार्य तदेवगायन्तिस्म, यथा—

पश्य सखीकुलगोकुलराजम्,
पत्रोत्सवमनु खेलाभाजम् ॥ध्रु०

उदधिप्रभवदधि संप्लवदेशम्,
परितोघूर्णितमन्दरवेशम् ॥

मध्यघटी फणिराजे कृष्टम्,
हृद्यसुहृद्भिरतीव च हृष्टम् ॥

मध्य-मध्ये दुर्लभदानम्,
ददतं दधतं विस्मयमानम् ॥

एकं सुतरत्नमभवदपूर्वम्,
अजनि विधुर्बत यदितः पूर्वम् ॥

सालवगौडरागेण गीयते—

मृगमदलसितरुचिर वपुषापरिरंभि च घनघनसारं
वेणिभुजंगोच्चिरजितयाशिखिचंद्रकचूडमुदारं ।
सखि हे गोकुल राजकुमारम् ।
राधिकया सह कलयमनोभव साधिकया सुकुमारम् ।ध्रु०
नव चपलाचपलांगरुचा रसवर्षणवारिदजालं

कांचनवल्लरिरेकोज्वलया द्युतिर्निर्जितनीलतमालम् ।
राधा मानगरलपरिखण्डनवेणुरवामृतधृष्ट
राधामहतिललितगीतश्रुतिप्रेमविकुंठितकंठ ।
अपि कुतुकेन सरस्वतिविरचितगीतमिदं वुधवृन्द
श्रुतिचक्रेणनिपीयमहासुखमिहरुचिरादनुचित ॥

× × ×

महारसैकाम्बुधिराधिकायाः
क्रीडा कुरंगस्मरविह्वलायाः ।
आनन्द मूर्तिर्निजवल्लभायाः,
पादारविंदे कुरुकिंकरीं मां ॥

एतदपि श्लोकयामासुः—

नेयं दुग्धविकीर्णपालि रपितु द्राग्वारिधारागति-
र्नेयं स्यान्नवनीतपिण्डविसृतिर्मुक्तास्तु मुक्ताम्बुदाः ।
नेयं दीर्णहरिद्रनीरविकृतिः किन्तु प्रभाविद्युतां
पर्बैर्वेदमतीव हर्षमहसा वर्षा वपुर्निर्ममे ॥

बालस्य मातामहमेत्यमातुला-
स्तदागृहीताः करचोरकाइव ।
दध्यादिपंकेषु मुहुर्विकर्षणात्
पितृव्यवर्गेण विहस्य दण्डिताः ॥

नन्दश्चः—

महोदारचित्तश्चितानेकवित्तः
समाहूय सर्वं गुणाजीविखर्वम् ।
बिना तद्विचारं वपुः शक्तिसारं
समुत्क्षिप्य रत्नं ददे सातियत्नम् ।।

किञ्च—

ग्रहीता याचितान्यत्र प्रदाता गोलिकायुतः ।
श्रीमन्नन्देन दाने तु तत्र जातो विपर्ययः ।।

अतएवः—

बिनायाञ्चा ददानेतु सर्वं व्रजपतौ तदा ।
कल्पद्रुचिन्तामण्याद्यास्तेऽप्यासन् कृपणाइव ।।

तत्र च—

अनेनप्रीयतां विष्णुस्तेनस्यान्मे सुते शिवम्
एवं प्रसभमुद्भूता दानेनन्दस्य भावना ।
आशीर्वादप्रदानार्थमागताः सुरसत्तमाः ।
स्वस्ववाहनैर्युक्ता नन्दनन्दनमन्दिरे ।।

[स्वस्य]

हंसवाहनारूढो हेमवर्णो मुकुटी कुंडली स्फुरन् चतुर्वदनो वेदकर्ता दिशाम् मंडलम् द्योतयन् ब्रह्मा देवः समा जगाम ।

वृषारूढो महेश्वरः भूतैः परिवृतो जगाम । रथारूढो रविः, गजारूढः पुरन्दरः, खंजनारूढो वायुः, महिषवाहनो यमः, पुष्पकारूढो धनदः, मृगारूढः क्षपेश्वरः, अजारूढो वीतिहोत्रः, मकरस्थितो वरुणः, मयूरस्थितः कार्तिकेयः, हंसवाहिनी भारती, गरुडारूढा लक्ष्मीः, सिंहवाहिनी दुर्गा, गोरूपधारिणी विमानस्था पृथ्वीदेवी, दोलाधिरूढा दिव्यवर्णा मुख्याः षोडशमातृकाः, शिबिकारूढा षष्ठी देवी ।

ग्रहेषु—वानरारूढो मंगलः, मेषारूढो बुधः, कृष्णसारस्थः गीष्पतिः, गवयवाहनः शुक्रः, मकरारूढः शनिः, उष्ट्रवाहनः सिंहिकासुतः, कोटिबालार्क संकाशा नन्दमन्दिरम् जग्मुः ।

कोलाहल समायुक्तं गोपगोपी गणाकुलम् ।
नन्दमन्दिरमभ्येत्य क्षणं स्थित्वा ययुः सुराः ।।
परिपूर्णतमं साक्षाच्छ्री कृष्णं बलरूपिणम्,
नत्वादृष्ट्वा तदा देवाश्चक्रुस्तस्यस्तुतिं पराम् ।

उक्त श्लोक के अनुसार नन्दनन्दन को आशीर्वाद देने के लिये अपने-अपने हंस वृषभ आदि वाहनों पर सवार होकर आने वाले ब्रह्मा, शिव आदि देवताओं का वर्णन किया गया है ।

वीक्ष्य कृष्णं तदादेवा ब्रह्माद्या ऋषिभिः सह
स्वधामानि ययुः सर्वे हर्षिताः प्रेमविह्वलाः ।

विप्राशीर्वचनानि तद्यथाः—

गणाधिपोभानुशशीधरासुतो
बुधोगुरुर्भार्गवसूर्यनन्दनः ।
राहुश्चकेतुप्रभृति ग्रहाःइमे
कुर्वन्तु ते पूर्ण मनोरथं सदा ॥

नवग्रहाः सदा मनोरथान्पूर्णान् कुर्वन्तु ।

आदित्यादिग्रहाः समस्तमुनयो हीन्द्रादि देवास्तथा
विश्वामित्र पराशर प्रभृतयो रक्षन्तु ते सर्वदा ।
भो भो नंद तवात्मजं सुखकरं गो गो जनानंददं
श्रीमच्छ्रीव्रजराजवंशतिलको भूयात् तवायं सुतः ॥

व्रजभाषाप्रियाः सूताजगादयमातृभाषामधिकृत्य जगुः—

हम हैं सूत तेरे भयो है पूत, जाय सेवें जोगी अवधूत
तेरो भाग्य है अकूत, अब कर कछु करतूत ॥

यहाँ पर गोप-गोपियों के कोलाहल से युक्त नन्द मन्दिर पर आने वाले देवगणों के द्वारा की गई स्तुति और ब्राह्मणों द्वारा दिये जाने वाले आशीर्वचनों का वर्णन किया गया है।

नन्दनन्दन के जन्म की खुशी पर आने वाले प्रिय व्रज-

जगा—

हम हैं जगा,
सब जग ठगा,
दै हमकूं झगा जामें लगे जरी के तगा,
और दे बांधवे कूं पगा
पांवन कूं दै जोरा, चढ़वै कूं दै घोरा,
भैया कूं दै गैया वाके बेटा कूं एक रुपैया,
हमारी घरवारी–ताकूं दै पीरो सारी,
तामें लगो गोटा किनारी।
नातो दैंगी गारी बु है लरहारी, फैर करैगी ख्वारी ॥

कवि—

हम हैं कवि, तेरें भयो अनादि को कवि,
हम आये जवी कवी,
तेरे लाल की छवि, हमारे हिये में फबी
निकारौ गड़ी दबी, हम लेंयगे कनक की डवी,
हम जांयगे जवी ॥

गवैया—

श्रीनंदराय तेरे भयो है कन्हैया, हम आये हैं गवैया

भाषा के ज्ञाता सूत (जगा) कवि, गायक, गोपियों आदि के द्वारा प्रयुक्त वचनों का सुन्दर रूप देखने को मिलता है।

कृष्णो निद्रां जहौ—तदा माताऽपश्यत्—
पर्य्यंके न्यस्य सव्यं तदुपरिनिहितस्वांगभारादथपाणिं ।
कृष्णस्यांगं स्पृशंतीतर निजकरकमलेनेषदाभुग्नमध्या ॥
सिंचंत्यानंदवाष्पैः स्नुतकुचपयसां धारयाचास्य तल्पं ।
वत्सोत्तिष्ठाऽऽशु निद्रां त्यज मुखकमलं दर्शयेत्याहमाता ।
ताथैः ताथै मृदंगान् मृदुकरकमलैर्वादयंतः प्रसन्नाः ।
ही ही ही हीति ही ही स्वर रव मुदितान्हासयंतोव्रजस्थान्

तू है रिझैया, हमें दै मोहर रुपैया,
व्रजराज हम आये बजवैया, तुम हो आज रिझवैया,
हम लैं तेरे कानू की बलैया ॥

गोपी—

हौं एक बात नई सुनि आई ।
महरि जसोदा ढोटा जायो घर-घर बजत बँधाई ॥
द्वारैं भीर गोप गोपिन की महिमा वरन न जाई ।
अति आनंद होत गोकुल में रत्नभूमि निधि पाई ॥
नाचत तरुण वृद्ध अरु बालक गोरस कीच मचाई ।
सूरदास स्वामी सुखसागर सुन्दर स्याम कन्हाई ॥

पर्यंक पर निद्रा विहीन पुत्र को देखकर माता यशोदा पुत्र से अपना वदन कमल दिखाने की प्रार्थना करती है, अन-

प्रादुर्भूतं सुतं तं प्रमुदितवदनादर्शयन्तः स्वनेत्रैः ।
हावैर्भावैर्विभावैः प्रचलितवसनाः वन्दिनः संविरेजुः ।।
किं ब्रूमस्त्वां यशोदे कति कति सुकृतक्षेत्रवृन्दानिपूर्वं ।
गत्वाकोट्टग्विधानैः कति कति सुकृतान्यर्जितानित्वयैव ।
नो शक्रो न स्वयम्भूर्नचमदनरिपुर्यस्य लेभेप्रसादम् ।
तत्पूर्णं ब्रह्मभूमौ विलुठति विलपत् क्रोडमारोढुकामम् ।।

अवाद्यन्तविचित्राणि वादित्राणि महोत्सवे ।
कृष्णेविश्वेश्वरेऽनन्ते नदस्य व्रजमागते ।।१३।।

विश्वेश्वरे, अनन्ते कृष्णे नन्दस्य व्रजमागते विचित्राणि वादित्राणि महोत्सवे जनैः वादकैश्च अवाद्यन्त चतुर्विधानि वाद्यानि प्रसिद्धानि ततम्–वीणादिकम् आनद्धम्–मुरजादिकम्, सुषिरम्–वंशादिकम् घनम्–कांस्यतालादिकमिति । उक्तं वैष्णवतोषिण्याम्—

ततं वीणादिकं वाद्यमानद्धं मुरजादिकम् ।
वंशादिकं तु सुषिरं कांस्यतालादिकं घनम् ।।

न्तर वन्दीजन ता थै ता थै ध्वनि से मृदङ्ग को बजाकर हा हा ही ही शब्दों से गोप समुदाय को हँसाते हुए यशोदा की पुत्रोत्पत्ति से उसके भाग्य की सराहना करते हैं ।

आदि पद्यानुसार विश्वेश्वर कृष्ण के नन्दराय के व्रज में

व्रज वादित्रेषु वाद्यमानेषु जगतियानि वादित्राणि तान्यपि स्वयं जनैश्च वादितानि बभूवुरित्यर्थः। यावदुत्सवोपरिविराजमाने तन्महसि तत्राऽपि हेतवः कृष्णे जगच्चित्ताकर्षकमाहात्म्यतया स्वयमवतीर्णभगवति विश्वेश्वरे सर्वप्रभौ अनन्ते, स्वरूपैश्वर्य माधुर्यैरपरिच्छिन्ने नन्दस्य व्रजं परमप्रेमानन्दामृतसमुद्रतया परमं निजोचितपदम् ईयुषि तस्मिन्नुदयतोत्यर्थः। 'व्रजमुपेयुषि' पाठोऽत्र जीवगोस्वामिसम्मतः वीरराघवाचार्योऽपि सम्मनुते। परश्चात्र स्वयमेव जीवगोस्वामिना आगत इति पाठोऽपि लिखितः।

'कृष्णे विश्वेश्वरेंऽशेन[1]' इति पाठं मन्यमानास्तु-अंशेन बलरामेण सह विश्वेश्वरे कृष्णे नन्दव्रजमुपेयुषि सति तस्मिन् महोत्सवे विचित्राणि वाद्यान्यवाद्यन्त।

उपेयुषि=प्राप्तवति इतिविजयध्वजाचार्याः।[2]

दशविधानिवाद्यानि श्रीमहाचार्यसम्मतानि—लौकिकवाद्यकृतमुत्सवमाह – स्वभावतोदशविधानि

१ भागवत चन्द्र-चन्द्रिका १०।५।१३
२ पद० रत्ना०

आने पर मुरज, सुषिर, वंशी, वीणा आदि अनेक प्रकार के आनन्दप्रद वाद्यों के बजने का वर्णन हुआ है।

वाद्यानि विचित्राणि ततोऽप्यनन्तानि भगवतो जन्मोत्सवे वादका वादयामासुः१ ।

अत्रेदं चिन्तनीयम् यदस्मिन्नेवस्कन्धेऽष्टमाध्याये गर्गद्वारैवनामकरणम् विलिखितं ततः प्राक् संज्ञा कथमिति ? समाधानमत्र—यद्यपि नामकरणसंस्कारानन्तरमेव संज्ञा जायते तथापि भगवतिनियमाभावात् पूर्वसंज्ञानामेव गर्गेणोक्तत्वात् ।

कृषिर्भूवाचकः शब्दःणश्चनिर्वृ तिवाचकः इतिवाक्यात् कृष्णः सदानन्दः । कृष्णः आनन्दस्वरूपः विश्वस्य नियन्ता अनन्तः नविद्यते अन्तो यस्य अथवा कालः तस्य महोत्सवस्त्ववश्यमेव कर्त्तव्य इति ।

नन्दः=अल्पः तस्य गृहे महति समागते महोत्सवः कर्त्तव्य एव अन्यथा महानपकुर्यात् ।

---

१. सुबोधिनी ।

"कृष्णे विश्वेश्वरेऽनन्ते" के स्थान पर "कृष्णे विश्वेश्वरें ऽशेन" पाठ स्वीकार करने वाले यहाँ ब्रज में बलराम के साथ भगवान् श्रीकृष्ण के प्रादुर्भाव को स्वीकार करते हैं।

श्रीभट्टाचार्य के द्वारा सम्मत लौकिक १० प्रकार के वाद्यों का वादकों द्वारा बजाया जाना वर्णित है। साथ ही कृष्ण विश्वेश्वर आदि के रूप में गर्गाचार्य द्वारा बाद में किये जाने

नन्दो द्रोण नामकः वसुः तस्य भक्तिः कृष्णे प्रसिद्धैव अतः वादित्रवादनमुचिततरमिति ।

सनन्द उवाचः—
आशाधृता बहुदिनैः कुलपूज्यविप्रै-
स्तां तोषयाशुधनवस्त्रहिरण्यगोभिः
अन्नादिभिर्बहुविधैश्च पुरोहितानां
पश्चाज्जनेभ्य इतरेभ्य इदंप्रदेयम् ॥

गोपाः परस्परं हृष्टा दधिक्षीर घृताम्बुभिः ।
आसिञ्चन्तो विलिम्पन्तो नवनीतैश्च चिक्षिपुः ॥

(नन्दो० १४)

हृष्टाः सन्तोदध्यादिभिः परस्परम् आसम्यक् सिञ्चन्तः नवनीतैश्च परस्परं विशेषेण लिम्पन्तः परस्परं

वाले नामकरण संस्कार का भगवद् विरुद्ध में किये जाने वाले किसी नियम के अभाव में उनकी पूर्व संज्ञा का संकेत किया गया है ।

उक्त श्लोक के द्वारा नन्दनन्दन के व्रज में प्राकट्य से अत्यधिक प्रसन्न चित्त गोपों द्वारा दही, दूध, नवनीत और जल के द्वारा परस्पर सिचन लिम्पन आदि का सुन्दर वर्णन हुआ है । इस प्रसंग पर यह भी बतलाया गया है कि गोपियों को भगवदा-

चिक्षिपुः बलेन प्रच्छन्नतया वा पिच्छिलपङ्क्स्खलयामासुः[१]।

गोपिकानां भगवत्स्मरणेनैव भगवदावेशोजातः गोपानां तु भगवत्संनिधानेन भगवद्धर्मप्राकट्ये आवेश इति भगवदाविष्टानां गोपानामुत्सवप्राकट्यमाह—गोपा इति दधिक्षीरघृताम्बुभिर्मिलितैः परस्परमासिञ्चन्तः दध्यादि मुखेषु विलिम्पन्तः नवनीतैः पिण्डैः चिक्षिपुः अन्योन्यस्योपरि प्रक्षिप्तवन्तः।

अथवा यस्य यत्प्राप्तिः केचित् दध्ना केचित् क्षीरेण केचित् घृतेन केचित् अम्बुभिश्च आसिचनं तुल्यतया लिम्पनमाधिक्ये अतिरसाविष्टे नवनीतैः क्षेपः अतिमत्ततया एवं सर्वेषां महानुत्सव उक्तः।

यद्वा-नीतैर्गृहीतैर्दध्यादिभिर्नवशब्दोपलक्षितान्नवनंदांस्तत्सम्बधिनश्चविचिक्षिपुरित्यर्थः।

नन्दोमहामनास्तेभ्योवासोलङ्कारगोधनम्।
सूतमागध वन्दिभ्यो येऽन्ये विद्योपजीविनः॥१५

---

१. वं० तो०।

वेश केवल उनके स्मरण से हुआ था, जबकि गोपों को वह आवेश भगवत्सान्निध्य से हुआ है।

महामनाः नन्दः तेभ्यः [गोपीभ्योगोपेभ्यश्च] तथा सूतादिभ्यश्च [सूत-मागध वन्दिभ्यः] तथा ये चान्ये विद्योपजीविनः (गायकवादकादयः) तेभ्योऽपि वासोलङ्कारगोधनादिकम् प्रादादितिशेषः।

धनं स्वर्णरूप्यादि, भरतशास्त्रादिविद्ययोपजीवकाः नटादयः तेभ्यः ददौ।

विद्यास्तु चतुर्दशधाधर्ममीमांसादिरूपारताभिरुपजीवंति तथा प्रथमं विद्यावतां दानम्—बहुदानं विद्यायुतेभ्यः कर्त्तव्यम् अतः वासांसि अलङ्करणानि गावोधनं च गोधनं गोष्ठं वा ब्राह्मणेभ्यः वस्त्रालङ्करणपूर्वकं दत्तवानिति लक्ष्यते। एकैकस्यैकमेकं गोष्ठं वादत्तवानिति। अन्ये—गायकाः वैद्याः ज्योतिर्विदश्च शाकुनिकाः स्त्रियश्च तेभ्यः सर्वेभ्य एव दत्तवान्।

तैस्तैः कामैरदीनात्मा यथोचितमपूजयत्।
विष्णोराराधनार्थाय स्व पुत्रस्योदयाय च ॥१६

उक्त श्लोक के अनुसार महामना नन्द के द्वारा अपने पुत्र जन्म के अवसर पर होने वाली प्रसन्नता से द्वार पर आने वाले सूत, मागध, बन्दीजन तथा अन्य गायक वादकों के सोना-चांदी आदि के द्वारा किये जाने वाले स्वागत सत्कार का वर्णन हुआ है।

(नन्दः) अदीनात्मा तैस्तैः कामैः विष्णोराराधनार्थाय स्वपुत्रस्योदयाय च यथोचितमपूजयत् ।

यद्यपि महामनाः पूर्वमुक्तमस्मिन्श्लोकेऽदीनात्मेति अतः पुनरुक्तिः प्रतीयते तत्र कारणम् श्रीकृष्णमनस्त्वेन तत्रौदार्यविज्ञत्वादिगुणानां मुहुरतिशयिताभिप्रायेण न केवलं तावतातृप्तवान् किञ्च तैस्तैः कामैःसह पुनश्च ये ये स्वैरं प्रार्थितास्तत्तत्कामदानपूर्वकं सर्वास्तान् यथोचितं जातिवयोविद्याऽनुरूपं अपूजयत् । स्रक्चन्दन ताम्बूलप्रोत्साहनादिभिः सम्मानितवांश्च । दानादेरुद्देश्यमाह–विष्णोराराधनस्ययोऽर्थः फलं तत्संतोषः तस्मै, परमवैष्णवत्वात् कामितार्थानन्त्यकामत्वाच्च न त्वपूर्वमात्राय तथा स्वपुत्रस्याभ्युदयाय च अनेनकर्मणा श्रीविष्णुः सन्तुष्यतु तत्प्रसादेन च ममपुत्रस्याभ्युदयोभवत्विति संकल्पयन्नित्यर्थः ।

नन्दगृहे रूप-गुण-लीला-ऐश्वर्य प्रकाशनायेति ज्ञेयम् ।

अदीनात्मा-न दीनो लुब्धः आत्माअन्तःकरणं यस्य

उक्त श्लोकके अनुसार नन्द महर के द्वारा भगवान् विष्णु की प्रसन्नता और अपने बालक के उदय को ध्यान में रखकर बढ़ी हुई उदारता के साथ आगन्तुक सभी गुणीजनों का उनकी योग्यतानुसार किये गये स्वागत सत्कार का वर्णन हुआ है ।

ननु यदि, अदेयं प्रार्थयेत् कश्चित् दैत्यो वा तदा किं कुर्यात्तत्राह–यथोचितमिति-उचितमनतिक्रम्यदेये सम्प्रदाने च उचितत्त्वम् । विष्णुप्रीत्यर्थं स्वपुत्रस्य अभ्युदयार्थं च तस्य ज्ञानानुरोधात् भिन्नतयाकथनं चकारात् ग्रहादिप्रार्थनार्थं चेति श्रीमदाचार्याः[१] ।

नवग्रह दिक्पालादिपूजनमत्रनन्दद्वारेति ज्ञेयम्[२]

वदान्योको भवेदन्यो वदान्यो नन्दभूपते ।
सुतजन्मोत्सवे येन सर्वस्वमपिचार्पितम् ॥

सवैया (कवित्त-छन्द)—

पूत सपूत जन्यो जसुधा,
इतनी सुनिकैं वसुधा सब दौरी ।
देवन कौं आनन्द भयौ सुनि,
धावत गावत मंगल गौरी ॥
नन्द कछू इतनौ जु दियो धन,
स्वामि कुबेरहु की मति बौरी ।
मोहि देखत व्रजहिं लुटाय दियो,
न बची बछिया छछिया न पिछौरी ॥

रोहिणीच महाभागा नन्दगोपाभिनन्दिता ।
व्यचरद्दिव्यवास स्रक्कण्ठाभरणभूषिता ॥१७॥

---

१. सुबो० । २. सा द० ।

रोहिणीति—नन्दगोपाभिनन्दिता दिव्यवासःस्रक्-कंठाभरणभूषिता महाभागा रोहिणी च व्यचरत् ।

रोहिणी रोहयति जनयति व्रजसुखं तच्छीलेति अद्यैव स्वनामनिरुक्तिसाफल्यपरमोत्कर्षं प्राप्तेतिभावः ।

सा च महाभागा तादृशस्वीयपुत्रोदयेन तस्यापि परमाश्रयस्य निजप्राणसहचर्याः श्रीयशोदायास्तनयस्या-भ्युदयेन च तत्तद्वाल्यादिलीलामाधुर्यलाभेन च अन्याभ्यः श्रीवसुदेवपत्नीभ्यः श्रीदेवकीतश्च भाग्यविशेषवती त्वदा-गमनमात्रेण मंगलेनैवायं ममपुत्रोजात इति श्रीमन्नन्दा-भिधगोकुलराजेनाभिनन्दितासती-"धोपो भूपेऽपि" इत्य-मरः तद्दत्तानि दिव्यानि मर्त्यदुर्लभानि यानि वास आदी-निस्वयमपि—तदुल्लासेनैवसर्वं दुःखं विस्मृत्य तैर्मण्डिता-सती व्यचरत्-महोत्सवे तस्मिन् प्रीत्या विविधव्यापारेण इतस्ततो बभ्रामेत्यर्थः । एतदर्थमेव स्वगृहान्तः शायि-तस्य तदीयाभिनवबालकस्यात्रानुक्तिः१ ।

रोहिणी पतित्यक्ताऽऽसीत् । स्वस्यदुःखस्य पत्युः

---

१. वै० तो० ।

उक्त श्लोक के द्वारा नन्दराय से अभिनन्दित रोहिणी देवी का वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर नन्द भवन में भ्रमण वर्णित है । जो पति द्वारा अपने परित्याग के दुःख को भूलकर

कारागारगतं कष्टं विज्ञायसर्वंदैवचिन्तितासतीगोकुले न्यवसत् । परमद्य नन्दोत्सवानन्दपयोधिनिमग्नास्वस्य-सर्वं कष्टं विस्मृत्य दिव्यवासोदिव्यालंकारभूषितासती समागतगोपवधूनांस्वागतार्थमितस्ततः व्यचरदिति । पत्युः कष्टं विस्मृत्यैवं सा व्यवहृतवती नान्यथेति ।

स्त्रीभ्योदानेरोहिण्यैदत्तं भयादप्रकटं भवेदिति भग-वदावेशात् दातुः प्रतिगृहीतुश्चभयाभावं ज्ञापयितुं रोहिणो चरितं निरूपितम् । यद्यपि बलभद्रोत्पत्त्या सा भाग्यवती तथापि बाललीलां द्रक्ष्यति अतः सा महा-भागा उक्ता । चकारात् सर्वास्त्रियः महाभागाः त्रिवि-धानि स्त्रीणामलङ्करणानि भवन्ति—वस्त्रमयानि-पुष्प-मयानि-सुवर्णमयानि च । चरण-हस्तयोः स्वभावतोऽपि भवन्ति, कण्ठाभरणानि तु पदकहारादीनि वैशेषिकाणि अतस्तेषां ग्रहणं विशेषेणाचरन् । गृहिणीव सर्वकार्यकर्त्री-जाता अनेन रोहिणीसम्बन्धादयंकृष्ण इति ज्ञानकृतं भयमपि निवारितम् ।[1]

---

१. सुबो० ।

घर में आने वाली गोप-वधुओं के स्वागत सत्कार हेतु सन्नद्ध देखी जा रही है ।

तत आरभ्य नन्दस्यव्रजः सर्वसमृद्धिमान् ।
हरेर्निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभून्नृप ॥१८॥

हे नृप ! तत आरभ्य नन्दस्य सर्वसमृद्धिमान् व्रजः हरेः निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभूत् ।

सर्वेषां याचकानां विप्राणां सूतमागधबन्दिजनानां चाभिमतपूरणं तु धनदेनापि-अशक्यम् कथं नन्देनकृतम् तत्राह तत इति—हरेरात्मगुणैः पालनादिभिः रमायाः सर्वसम्पत्तेः 'रमा श्री सर्वसंपदोः' इति यादवः । यदा सर्वसंपत्तिरेवक्रीडितुमारेभे तदा कस्यदेयवस्तुनस्तत्राभाव इति भावः ।

यद्वा 'नायं श्रिय' इत्याद्युक्तरीत्या वैकुंठ श्रीतोऽपि व्रजदेवीनामेव परमरमात्वोक्तेस्तासामपि परमा रमा श्रीराधा तस्या अपि तदानीमाविर्भावात्तस्याश्चक्रीडास्थानं तदारभ्याभूदिति । किञ्च चिंतामणिसद्मादीना-

---

उक्त श्लोक के द्वारा आगन्तुक समस्त गोपीजनों का मनोवांछित सम्पत्ति से स्वागत सत्कार करने वाले नन्द के द्वार की अपूर्व सम्पत्तिशालिता का कारण हरि भगवान् के आश्रय तथा प्रादुर्भाव को बतलाया गया है ।

साक्षात् रमा के क्रीडा स्थल केवल नन्द के घर की ही

मपि निगूढनित्यक्रीडायां श्रवणात्तद्रमाक्रीडमेवेति तत्त्वम्[१] । तदुक्तम्—

चिन्तामणि प्रकरसद्मसुकल्पवृक्ष-
लक्षावृतेषु सुरभीरभिपालयन्तम् ।
लक्ष्मीसहस्रशतसंभ्रमसेव्यमानं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥

(ब्र० संहिता)

'मथुरा भगवान्यत्र' इत्यादि न्यायेन "योऽसौ गोषेषु तिष्ठति" इति तापनी श्रुत्या 'जयति जन निवासः' इति 'श्रीयान्मइन्द्रोगवां' 'भगवान्गोकुलेश्वरः' इति शुकोक्त्या च हरेर्निवासात्मभूतोय आत्मा तस्य स्वस्यैव ये गुणास्तैः सर्वसमृद्धिमान् व्रजः तत इति तस्य जन्मारभ्य तु रमाक्रीडं बभूव[२] ।

वस्तुतस्तु व्रजदेवीनामेव परमरमारूपाणामत्र-संकेतः परम रमा शब्देन राधायाः स्पष्टोल्लेखः । श्रीराधायाश्च तदानीमेवाविर्भावाद्विहारस्थानमपि बभूवेत्यर्थः ।

---

१. भावा० दी० प्रकाश, २. वै० तो० ।

नहीं, समस्त व्रजमण्डल की सम्पत्तिशालिता का अधिक सुन्दर वर्णन किया गया है। जिसमें नन्द के द्वारा उस सम्पत्ति के

यदि च तत आरभ्य नन्दस्य व्रज: सर्वसमृद्धिमान् सन्हरेर्निवासात्सगुणैरमाक्रीडं यथास्यात्तथाऽभूदिति सरलान्वय: क्रियते तदपिपूर्ववदेवार्थ: प्रसज्यते तदारभ्य तस्य व्रज: सर्वसमृद्धिमान्-आसीदितिमात्रं किं वक्तव्यं य: खलु हरिनिवासलक्षणस्यस्वरूपस्यगुणैरमाणां तासामप्याक्रीडतयाऽऽसीदिति ततो जगल्लक्ष्मीमात्रदृष्ट्याप्याकस्मिकसर्वसम्पत्तिसम्भवात्तदानीं तत्र किमसम्भवं यत्र चिन्तामणिमन्दिरादयोऽपि निगूढलीलायां सन्तीतिभाव: । अनेन श्रीव्रजदेवीनामपि भगवद्वत् प्राकट्यमात्रं जन्मसूचितं रमाक्रीडशब्देन च सर्वसमृद्धिमत्त्वेवाच्येपौनरुक्त्यं स्यात् (रमान्तर) क्रीडत्वेवाच्ये प्रसिद्धिविच्युतिर्भवति । हरेर्निवासात्मगुणैस्त्येरितावता विवक्षितसिद्धेरात्मपदवैयर्थ्यं जायते । तस्मादविचारप्रतीतमर्थान्तरं नादृतम् ।

एवं सर्वप्रकारै: सर्वस्वे व्ययिते नन्दस्यसमृध्यभावमाशंक्य भगवन्निवासात् तस्यमहती समृद्धिजतित्याह तत आरभ्ययदापूर्वोक्तानिदानानि दत्तवान् तत: प्रभृति

निरन्तर व्यय किये जाने के बाद भी वह बढ़ती ही जा रही है। जिसका एकमात्र कारण भगवान् का व्रजमण्डल में निवास ही है।

विष्णुबुध्यापूजितत्वात् तस्याप्यानुषङ्गिकमेतत्फलं सर्वाः धनपशुज्ञानादिसमृद्धयः न केवलं नन्दस्य किं तु सर्वेषामित्याह–व्रज इति । न केवलं समृद्धि मात्रं किं तु वैकुण्ठवत् कान्तिविशेषोऽपि जात इत्याह हरेरिति ।

गोकुले गवां सम्मर्द्दात् स्थानं कुश्लिष्टमेव भवति अतस्तदभावार्थमेतद्वक्तव्यं कान्तिश्चाधिदैविकी सर्वोत्तमा सा लक्ष्मीनिवासादेव भवतीति,तदाह–रमाक्रीडमभूदिति रमायाः आसमन्तात् क्रीडा यस्मिन् तत् रमाक्रीडं वैकुण्ठ-स्थानं तदभूत् तत्र हेतुः हरेर्निवासात्मगुणैरिति स हि सर्वदुःखहर्ता भक्तानां वैकुण्ठपर्यन्तं गमनमप्यसहमानः इहैव वैकुण्ठं समानीतवानित्यर्थः । आनीतेऽपि वैकुण्ठे यदि भगवान् न तिष्ठेत् तत्रापि त्रिभुवनसुन्दररूपेण तत्रापि ऐश्वर्यादि सर्वगुण प्राकट्येन तदा वैकुण्ठेऽपि शोभान स्यात् तदाह पदत्रयेण निवासात्म गुणैरिति निवासः स्थानं गृहं स्थितिर्वाऽऽत्मादेहः परमानन्दरूपः गुणाः ऐश्वर्यादयः तैः कृत्वा रमायाः क्रीडनं, स्थितौ-स्थितिः परमानन्दविग्रहेणरमणं गुणैरासमन्तात् रमण-मिति नृपेतिसम्बोधनं यत्रैवराजा तिष्ठति सैव राजधानी भवतीति ज्ञापनंसम्मत्यर्थम् ।

अत्र श्रीचक्रवर्तिपादा उच्यन्तेः—

ननु कुबेरेणाप्यशक्यं नराणां कामितपूरणं श्रीनन्द-

राजेन कथं कृतमित्यत आह–तत इति । हरेर्निवासात्म भूतस्य आत्मनो गुणैर्व्रजः सर्वसमृद्धिमानेव सर्वदातत आरभ्य तु रमायाः सर्वसम्पत्तेराक्रीडं क्रीडास्पदमभूत्-यदि सर्वसम्पत्तिरेव नन्दभवने क्रीडितुमारेभे तदा कस्य देयवस्तुनस्तयाभावइति भावः ।

गोपाः परस्परं दृष्टा दध्यादिकं चिक्षिपुः—

महोदारचित्ताचितानेकाचित्ताः
समाहूय सर्वं गुणाजीवि खर्वं ।
तद्विचारं वपुः शक्तिसारं
समुत्क्षिप्यरत्नं ददुस्सातियत्नं ॥

दधिदुग्धादिसेकेनमिथोहि शुभ्रतां गताः ।
तरंगा इव दुग्धाब्धेरनृत्यद्व्रगोदुहः ॥
दधिक्षीरघृतैर्गोपाः गोप्यो हैयंगवीनकै ।
सिषिचुर्हर्षितास्तत्र जगुरुच्चैः परस्परम् ॥
बहिरन्तः पुरेजातः सर्वतो दधिकर्दमः ।
वृद्धाश्चस्थूलदेहाश्चपेतुर्हास्यं कृतं परैः ॥

यहाँ पर श्रीमद्भागवत के श्रेष्ठ व्याख्याकार श्रीचक्रवर्ती के अनुसार भी नन्द अपनी सम्पत्ति जनों को इतना अधिक दान कर रहे हैं जितना कि स्वयं कुवेर के द्वारा भी असंभव है। इसके बाद इसी पेज पर गोपों द्वारा नन्दनन्दन के आविर्भाव

ब्रह्मादयोऽपि निजधामगतं निशम्य ।
कोलाहलंव्रजपतेर्महदुत्सवोत्थं ॥
तत्रागताः कृतविविक्तविचित्रवेषाः ।
नन्दात्मजस्य मुखदर्शनमर्थयन्ते ।
अथ तत्र सुरास्सर्वे व्रजे गोपालरूपिताः ।
मिलित्वा तेषु नृत्यत्सुः ददृशुर्बालरूपिणम् ॥
ते कृतार्थतयात्मानममन्यन्तमहोत्सवात् ।
तत्रागत्यविधिर्हर्षान्निर्भराशु तनूरुहैः ॥
अग्निराहुतयोमंत्रास्तंत्राद्याः सर्व एव हि ।
आगत्यननृतूराजन् नन्दात्मजमहोत्सवे ॥
ननर्त च तथा शक्रश्चैवमीशान एव च ।
गुहश्चविघ्नराजश्च नन्दराजमहोत्सवे ॥
तत्राह काश्चिदबलाः गोप्यः पश्यत चाद्भुतं ।
अयं चतुर्मुखः कोऽस्ति यो भूत्वा व्रजभाण्डकः ॥

की खुशी में दूध दही और सद्योगान नवनीत आदि पदार्थों के द्वारा किये जाने वाले परस्पर दधि कांदे का वर्णन है।

नन्द के व्रज में उस उत्सव पर होने वाले इस कोलाहल को सुनकर ब्रह्मादि समस्त देवगण भी विचित्र वेश धारण कर आ जाते हैं और बढ़ी हुई प्रसन्नता के कारण नाचने लगते हैं। उन देवताओं के आनन्द आदि का यह प्रसंग है तथा दानलीला आदि का वर्णन है।

नृत्यतीह च तत्साकं कोस्त्यनन्तविलोचनः ।
तथायं षण्मुखः कोऽस्तिभांडकः सूर्यलोचनः ।।
मन्येऽहमद्भुतोभानां निवहो नृत्यतित्विति ।
उत्सवे नंदपुत्रस्याद्भुतरूपोऽनु रूपतः ।।
अयं त्रिलोचनः शूली नृत्यत्यऽद्भुततांडवे ।
व्याघ्रचर्माम्बरधरोवृषारूढोऽतिहर्षितः ।।
अयं मूषकवाहोऽपि नृत्यते स्थूलदेहतः ।
एवं मिथोभिपश्यन्तः समूचुर्व्रजयोषिताः ।।
तावन्मिलित्वा ब्रह्माद्याः नन्दपुत्रांतिकं ययुः ।
सनत्कुमारकपिलशुकव्यासादिभिः सह ।।
रोहिणी राजकन्यापितत्करौ दानशालिनौ
तत्राप्यादिशतानीव वभूवाति महामनाः ।
गौरवर्णा दिव्यवासारत्नाभरणभूषिता
व्यचरद्रोहिणी साक्षात्पूजयन्ती व्रजौकसः ।
श्रीरोहिण्याहरिजनिसुखं शक्यतेकेन वक्तुं
यस्माद्वेषं विविधमदधाद्भर्तृतः प्रोषितापि,
चित्रं चित्रं सुकृतवरिमा दृश्यतां विश्ववन्द्यः
श्रीमन्नन्दोऽप्यमनुतनिजंभाग्यमायातिमस्याः ।।

सुफल जन्म प्रभु आज भयो ।

धनि गोकुल धनि नन्द जसोदा,
ताकें हरि अवतार लयो ॥

प्रगट भयो अब पुण्य सुकृत फल,
दीनबन्धु मोहि दरस दयो ।

बारंबार नन्द के आंगन,
लोटत द्विज आनन्द मयो ॥

मैं अपराध कियो बिनु जाने,
को जाने केहि भेस जयो ।

सूरदास प्रभु भक्त हेत वस,
जसुमति गृह आनंद लयो ॥

महाकवि सूरदास के एक पद में सुन्दर फलरूप भगवान् श्रीकृष्ण के जन्म के कारण, नन्द के गोकुल और स्वयं नन्द-यशोदा की धन्यता बतलाई गई है। ऐसे आनन्दप्रद अवसर पर ब्राह्मण सूरदास नन्दराय के आँगन में आनन्दाधिक्य के कारण लोटते हुए वर्णित हुए हैं।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
३	शंका	शङ्का
३	परोक्षितनृपाय	परीक्षिन्नृपाय
४	गंगा	गङ्गा
४	धनवोध:	धनबोध:
६	शंकैव	शङ्कैव
६	संनिध्यात	सन्निध्यात्
६	स्नातीभि:	स्नान्तीभि:
६	कंठ	कुण्ठ
६	प्रशांत	प्रशान्त
६	मकंठ	मकुण्ठ
६	परीक्षितनृगाय	परीक्षिन्नृपाय
६	हृदस्नेहैन	हृदा-स्नेहेन
८	भवत्यै	भवत्या
९	उड्डाप्य	उड्डाय्य
९	निद्रावशीभूतेजाते	निद्रावशीभूतायां
९	तत्रत:	तत:
९	प्रविष्य	प्रविश्य
१०	शक:	शुक:

पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
१०	शून्योइति	शून्यइति
१०	अष्टसिद्धि सहैव	अष्टसिद्धया सहै
१०	नान्यः साधनः कौपि	नान्यत् साधने किमपि
१०	सुकुमारांगः	सुकुमाराङ्गः
११	सुम्ब्राननं	सुम्ब्राननम्
११	राजापरीक्षिते	राजपरीक्षितं
१३	महानुत्सवं	महान्तमुत्सवं
१३	यत् आनन्दः	यः आनन्दः
१३	तत्	सः
१३	जातं	जातः
१३	व्रजवासीनाम्	व्रजवासिनाम्
१४	विमृष्य	विमृश्य
१४	परीक्षितस्य	परीक्षितः
१६	स्तुं	स्तु
१६	येवैश्यं	
१७	शुक वर्णेन	शुक वर्णनेन
२०	शख	शङ्ख
२१	षड्गमनि	षड्गमनृ
२२	गर्भं अपश्यन्ती	गर्भमपश्यन्ती
२४	पंच	पञ्च
२४	पंचभिः	पञ्चभिः
२४	विंदून्	विन्दून्
२४	वभूव	बभूव
२४	मंगल	मङ्गल
२५	पंच	पञ्च

पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
२८	व्रवीषि	ब्रवीषि
३०	मधुं	मधु
३०	महापद्यं	महापद्मं
३१	मात्मभजम्	मात्मजम्
३२	नन्दस्य भगिनी	नन्दस्य भगिन्या
३२	१ संहाय	संहृत्य
३३	आह्लादेन	आह्लादेन
३५	व्रजौकसान्	व्रजौकस:
३६	प्रसन्नमनोऽग्रे	प्रसन्नमना अग्रे
३७	परममित्रौ	परममित्रे १
३७	ददन्	ददत्
३८	हय्यंगवीन	हैयंगवीनं
३८	भाशिष:	माशिष:
४४	स्थापित	स्थापितम्
४४	किन्वा	किन्त्वा
४४	ध्वनयते	ध्वन्यते
४९	मन्पथा	मन्यथा
५०	उत्पनो	उत्पन्ने
५२	पूज्ययित्वा	पूजयित्वा
५२	परीक्षित् नृपते	परीक्षिन्नृपते
५३	क्षीरसागरं	क्षीरसागरे
५८	लेहयामासे	लेहयामास
५८	पुनरर्मको	पुनरभको
५८	द्वित्रिवारं	द्वित्रवारं
६०	त्रिभ:	त्रिभि:

पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
६३	प्रसारयत्	प्रासारयत्
६४	पिताभावो	पितृभावो
६९	सन्	सती
६९	श्रीमतीं	श्रीमती
६९	रोहिणीम्	रोहिणी
७०	धारयति	धारयतः
७०	सर्वे	सर्वैः
७१	भगवत अर्चा	भगवदर्चा
७२	गावः	गाः
७४	घंटा	घण्टा
७४	वंध	बन्ध
७४	शृंग	शृङ्ग
७५	वृतम्	वृत्तम्
७८	मुक्तं	मुक्तम्
७८	इत्युक्ते	इत्युक्तेः
८०	मंगलं	मङ्गलम्
८१	नंद	नन्द
८१	पंच	पञ्च
८१	शृंग	शृंगः
८३	कांति	कान्ति
८४	अम्बरीष इव	अम्बरीषस्येव
८६	अर्जुन इव	अर्जुनस्येव
८९	सुरांगना	सुराङ्गना
९१	दुन्दमय	दुन्दुभयः
९२	नानुरक्ती	नानुरक्ता

पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
९३	मृदंग	मृदङ्गः
९८	याता	याताः
९८	पुरुषार्थ	पुरुषार्था
९८	सेत्स्यति	सेत्स्यन्ति
१००	कंठेषु	कण्ठेषु
१००	शिखाभ्य	शिखाभ्यः
१०६	तदवथाय	तदवधार्य
१०६	पत्रोत्सव	पुत्रोत्सव
११५	ययस्मिन्येव	यदस्मिन्नेव
११९	ये ये	यै यैः
११९	सर्वास्तान्	सर्वांस्तान्
११९	अनुरूपं	अनुरूपम्
११८	लीला ऐश्वर्य	लीलैश्वर्य
१२०	वास स्रक्	वासः स्रक
१२३	वैकुंठ	वैकुण्ठ
१२५	झोडत्वे	क्रीडत्वे
१२७	तया	तत्रा

※ श्रीसवश्वरो विजयते ※

श्रीरासपञ्चाध्यायी-व्रजभाषा-टीकाकार-याज्ञिकसार्वभौम

पं० लक्ष्मणदत्तशास्त्रि चतुर्वेद की

शुभ सम्मति

श्रीव्रजेन्द्रनन्दनश्रीकृष्णचन्द्रस्यवाङ्मयमूर्त्तेः श्रीमद्भागवतस्यहृदयस्थानीये दशमस्कन्धे पुराणभारतसर्वगीताध्याय समफलकाष्टादश संख्याकपद्यात्मक नन्दमहोत्सवोनिवेशितो महर्षि वेदव्यासेनेति नतिरोहितं विपश्चिदपश्चिमानां विदुषाम्। तत्र गोकुलेनन्दसद्मनिद्विभुज लीलापुरुषोत्तमप्राकटच्येन लोकोत्तरा-रहस्यरूपानिर्वचनीयायालीला समजनि। तन्मार्मिकविशद-विवेचनं परम्परागतकथावाचकेन व्रजमण्डलीयपौराणिक मूर्धन्येन बहुविधकलाकोविदेन डा० श्रीवासुदेवकृष्णचतुर्वेदेन स्वप्रणोत नन्दोत्सव विवृतौसुष्ठुतयाऽनुष्ठितम्, तन्मयानि-भालितम्। अनेक स्थलेषु विलक्षणा शैलीप्रकटीकृतास्तेन लेखकस्य वैदुष्यं दृष्टिपथमायाति। सर्वेषां कथावाचकानां भावुकानां च मनोहारिणी नैश्रेयसप्रदायिनीचव्याख्यास्यादिति भूयो-भूयः श्रीराधासर्वेश्वरमभ्यर्थये।

लक्ष्मणदत्तशास्त्रि चतुर्वेदः

देंन चहैं करतार जिन्हें सुख

सो तो रहीम टरैं नहिं टारैं

उद्यम पौरुष कीनै विना

धन आप ही आवत हाथ पसारे

देव हंसैं मन ही मन में

विधिना के प्रपंच लखैं कछु न्यारे

पूत भयो वसुदेव के भौन

औ नौबत बाजत नन्द के द्वारे